अर्थववेदीय उपनिषद

लेखक

सुरेश चौधरी 'इंदु'

शुक्तिका प्रकाशन

अर्थववेदीय उपनिषद

ATHARVEDIYE UPNISHAD *By* **Suresh Choudhary 'Indu'**

ISBN : 978-81-998530-2-7

प्रकाशक :

शुक्तिका प्रकाशन

माइंडस्टार वेलनेस प्राइवेट लिमिटेड
24, हरिंगटन मेंशन
8, हो ची मिन्ह सारणी, कोलकाता-700071
email : ritzoff@gmail.com
मो. : +91 82409-61596

लेखक : **सुरेश चौधरी 'इंदु'**

© सर्वाधिकार लेखकाधीन सुरक्षित

मूल्य : 200/-

संस्करण : 2026

शब्द सज्जा : परमानंद झा, मो. : 95550-21641

मुद्रक : मिश्का इन्फोटेक, कोलकाता

अनुक्रमणिका

1. प्राक्कथन 05
2. उपनिषद - एक परिचय 07
3. प्रश्न उपनिषद - अर्थववेद 19
4. मण्डूक उपनिषद - अर्थववेद 55
5. कवि परिचय 83

प्राक्कथन

अथर्ववेदीय : वेद से वेदान्त तक

''वेद से वेदान्त तक'' शृंखला का यह अथर्ववैदिक खंड वैदिक दर्शन के सबसे जीवन-सन्निकट पक्ष को प्रस्तुत करता है। अथर्ववेद में दर्शन जीवन से पलायन नहीं, बल्कि जीवन की समग्र स्वीकृति के माध्यम से विकसित होता है।

अथर्ववेद मानव जीवन के भय, रोग, जिज्ञासा और मुक्ति के प्रश्नों को आत्मबोध से जोड़ता है। यहीं से वेदान्त की सर्वाधिक सूक्ष्म अवधारणाएँ प्रकट होती हैं।

इस ग्रंथ में अथर्ववेद से संबद्ध **प्रश्नोपनिषद** तथा **मण्डूक उपनिषद** को समाहित किया गया है। प्रश्नोपनिषद जिज्ञासा को साधना का रूप देता है; और मण्डूक उपनिषद आत्मा के सूक्ष्म स्वरूप पर प्रकाश डालता है।

यह पुस्तक अथर्ववेद को **मानव जीवन से ब्रह्मानुभूति** तक की पूर्ण वैदान्तिक यात्रा के रूप में प्रस्तुत करती है।

आपका

—सुरेश चौधरी 'इंदु'

दिनांक : 15 दिसंबर, 2025
तिथि : पौष कृष्ण पक्ष एकादशी

उपनिषद : एक परिचय

हे प्राणदाता!
व्योम में व्याप्त शून्य की गंभीरता,
सागर की गहराई में समाई नीरवता,
समाहित करती-
धरा की सहनशीलता
ॐकार के त्रिगुणों से आभासित कर,
ब्रह्म है आत्म-चिंतन,
विष्णु; भौतिक संरक्षक
शिव; कल्याणकारी मोक्ष प्रदाता,
तीनों का प्रतिरूप ओम्,
समग्र रूप से ओम्-मय कर,
ब्रह्म का वैश्वानर
सम्पूर्ण कामनाओं को
परिपूर्ण करता तेजस रूप
ओकार!
संतति का उत्कर्ष,
ब्रह्म-ज्ञान का समर्पण
सब को सम्मानित करता
उकार!
भूत-भविष्य-वर्तमान से मुक्त
आदि-अंत-अनादि से परे प्राज्ञ ब्रह्म
मकार!
ॐकार-निर्भय ब्रह्म पद,
मेरे चित्त को इस प्रणव में,
समाहित कर।

उपनिषदों में ओम् शब्द को बहुत महत्व दिया गया है। कठोपनिषद् कहती है कि सारे वेद जिस पद का वर्णन करते हैं, जिसकी साधना के लिए सारे तप किये जाते हैं, जिसकी इच्छा से मुमुक्षुजन ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं; वह पद है ओम् यह अक्षर ही परब्रह्म है। यह अक्षर ही अपर ब्रह्म है। इस अक्षर को ही 'यही उपास्य ब्रह्म है'-ऐसा जानकर जो स्त्री या पुरुष पर अथवा अपर; जिस ब्रह्म की इच्छा करता है, उसे वही प्राप्त हो जाता है। यदि उसका उपास्य परब्रह्म हो तो वह केवल जाना जा सकता है और यदि अपर ब्रह्म हो तो प्राप्त किया जा सकता है। यही ॐकार रूप आलम्बन ब्रह्म प्राप्ति के लिए सभी आलम्बनों में श्रेष्ठ यानी सबसे अधिक प्रशंसनीय है। इस आलम्बन को जानकर साधक परब्रह्म में स्थित होकर महिमान्वित होता है तथा अपरब्रह्म में ब्रह्मत्व को प्राप्त होकर ब्रह्म के समान उपासनीय होता है। माण्डूक्योपनिषद् के अनुसार यह जो कुछ भूत, भविष्यत् और वर्तमान है, उसी की व्याख्या है इसलिए यह सब ॐकार ही है। इसके सिवा जो तीनों कालों से परे, अपने कार्य से ही विदित होने वाला और काल से अपरिच्छेद्य आदि है, वह भी ॐकार ही है। आत्मा और इसके पादों के साथ ॐकार और उसकी मात्राओं का तादात्म्य करते हुए कहा गया है कि वह यह आत्मा अक्षर दृष्टि से ॐकार है एवं मात्राओं के साथ संयोग के कारण इसमें स्थैर्य है। पाद ही मात्रा हैं और मात्रा ही पाद हैं। वे मात्राएँ अकार, उकार और मकार हैं। ब्रह्म का वैश्वानर रूप पहली मात्रा अकार है। जो उपासक इसके गूढ़ अर्थ को समझ लेता है, वह सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर लेता है। तेजस ॐकार की द्वितीय मात्रा उकार है, जो उपासक इसके मूल अर्थ को ग्रहण करने की क्षमता रखता है, वह अपने ज्ञान एवं संतान का उत्कर्ष करता है। वह सबके प्रति समभाव रखता है और उसके वंश में कोई ब्रह्मज्ञानहीन पुरुष नहीं होता। प्राज्ञ ब्रह्म ॐकार की तीसरी मात्रा मकार है, जो

उपासक इसे तदानुरूप ग्रहण करता है, वह इस सम्पूर्ण जगत् को माप लेता है अर्थात् इसका यथार्थ स्वरूप जान लेता है। अकार विश्व-प्राप्ति में सहायक है, उकार तेजस और मकार प्राज्ञ पर अधिपत्य का साधन है किन्तु अमात्र में किसी की गति नहीं होती। मात्रा रहित होकर ॐकार तुरीय आत्मा ही है, जो उसे इस प्रकार ग्रहण करता है, वह स्वतः अपने आत्मा में ही प्रवेश कर जाता है। आप सभी चित्त को ॐकार में समाहित करें। यह निर्भय ब्रह्मपद है। ॐ में नित्य समाहित रहने वाले व्यक्ति को कभी किसी प्रकार का भय त्रस्त नहीं करता। प्रणव ही सबका आदि, मध्य और अन्त है। प्रणव ही सबके हृदय में स्थित ईश्वर है। इस प्रकार सर्वव्यापी ॐकार को जानकर बुद्धिमान व्यक्ति शोक नहीं करता। जिसने मात्राहीन, अनन्त मात्रा वाले शिवमय ॐकार को जाना है, वही मुनि है और कोई नहीं। मुण्डकोपनिषद् के अनुसार प्रणव धनुष है एवं आत्मा बाण है। ब्रह्म उसका लक्ष्य कहा जाता है। उसका सावधानी से वेधन करना चाहिए और बाण को उसमें तन्मय हो जाना चाहिए अर्थात् ब्रह्म रूपी लक्ष्य से एकरूप हो जाना चाहिए। छान्दोग्य उपनिषद् कहती है कि हमें ॐ अक्षर की ही उपासना करनी चाहिए।

व्याकरण की दृष्टि से उपनिषद का शाब्दिक अर्थ उप+नि+सद है, जिसका अक्षरशः आशय इस प्रकार है। उप - निकट, नि-नीचे, सद-बैठना। प्राचीन वैदिक काल में उच्चासन पर पदस्थ गुरु के समीप भूमि पर आसीन होकर शिष्यों को जो श्रुति ज्ञान प्राप्त होता था, वह उपनिषद कहलाता था, इस प्रकार मूलतः उपनिषद लिखित ग्रन्थ न होकर श्रुति ग्रन्थ हैं। इसे वेदांत भी कहते हैं। वेदों में हर मंडल के पश्चात सार बताया जाता था, उसे ही उपनिषद में परिवर्तित किया गया। उपनिषद में मुख्य रूप से कर्म, ब्रह्म, आत्मा, जीवात्मा आदि पर ही परिचर्चा है। वैदिक काल में एक ब्रह्म को सर्व माना गया है एवं 24 देवों का

पूजन एवं कीर्ति वर्णन है। ये सभी देव प्रकृति जन्य हैं, (अग्नि, वायु, जल, सूर्य, पूषा.....आदि)

कुछ परिस्थितियों में यह पति-पत्नी के बीच तो कहीं पिता पुत्र के बीच एवं कठोपनिषद में यह तरुण युवक एवं यम के बीच का वार्तालाप है। कहीं अध्यापक नारी रूप में हैं एवं छात्र स्वयं राजा हैं। वार्ताओं के अलावा उपनिषद में उद्धरण, दृष्टांत, दृष्टव्य, रूपक भी दिए गए हैं।

गुफाओं में, आश्रम में, गंगा तट पर, सदियों से यह ज्ञान बाँटा जा रहा है। यह कह सकते हैं कि उपनिषद, श्रोत्रिय ज्ञान का अद्भुत लिपिबद्ध संकलन है।

ऐतरेयोपनिषत्, ईशोपनिषत्, कठोपनिषत्, केनोपनिषत्, मांडुक्योपनिषत् मुंडकोपनिषत् प्रश्नोपनिषत्, ताश्वतरोपनिषत्, तैत्तिरीयोपनिषत्, इन नौ मुख्य उपनिषदों का रूपांतर इस पुस्तक में दिया गया है।

अधिकांश उपनिषदों में या तो यह चार वेदों का विस्तारण है या व्यक्तव्य वेदांत के रूप में दिया गया है। उपनिषदों की विशेषता यह है कि यह पूर्ण रूपेण ब्रह्माण्ड में समाहित है एवं कट्टरवाद से परे है। उपनिषद सैद्धांतिक रूप से शून्य एवं शांति को प्राप्त करने का द्वार है। यह वैदिक संस्कृति का मेरुदंड है। मूलतः भारतीय दर्शन का भाव-विस्तरण करता यह ग्रन्थ कर्म, योग, पुनर्जन्म, मोक्ष, आत्मा, ब्रह्म, ज्ञान, प्राण को परिभाषित करता है। उपनिषद, सृष्टि की रचना उत्पत्ति के कारण एवं इसमें स्थित तत्व के विश्वास को दर्शाता है।

पाश्चात्य शोधकर्मियों के अनुसार उपनिषद ईसा से 800-400 वर्ष पूर्व लिखे गए हैं। बाल गंगाधर तिलक के शोध के अनुसार ये 6000 से 800 वर्ष ईसा से पूर्व लिखे गए हैं।

यूँ तो 250 से ऊपर उपनिषदों का वर्णन है लेकिन अब तक 108 उपनिषदों का अस्तित्व ज्ञात हैं। इनमें से 12 मुख्य उपनिषद कहे गए

हैं। ये हैं - ऐतरेयोपनिषत्, ईशोपनिषत्, कठोपनिषत्, केनोपनिषत्, मांडुक्योपनिषत् मुंडकोपनिषत्, प्रश्नोपनिषत्, ताश्वतरोपनिषत् तैत्तिरीयोपनिषत्, छान्दोग्योप्निशत्, बृहद अरण्यकोपनिषद मैतिरियानी।

वेद	**सह् वेद**	**शाखा**	**उपनिषद**
ऋग वेद	केवल एक	शकल	ऐतेरिय
साम वेद	केवल एक	कौथुमा	छान्दोग्य
		जैमिनीय	केन
		रणनिया	
यजुर वेद	कृष्ण यजुर्वेद	कथा	कथा
		तैत्तिरीय	तैत्तिरीय, श्वेतास्वातर
		मैतिरियानी	मैतिरियानी
		हिरान्याकेशी	
		कथाका	
	शुक्ल यजुर वेद	वाजसनेयी	ईशा, बृहद आरण्यक
		काँव शाखा	
अथर्व वेद	दो	शौनक	माण्डुक्य, मुण्डक
		पीपलाद प्रश्न	

108 उपिनषदों की यह सूची मुक्तिक उपनिषद में 1:30-39 में दी गयी है:-

ईश = शुक्ल यजुर्वेद, मुख्य उपनिषद् केन = सामवेद, मुख्य उपनिषद् कठ उपनिषद्= कृष्ण यजुर्वेद, मुख्य उपनिषद् प्रश्न = अथर्व वेद, मुख्य उपनिषद् मुण्डक = अथर्व वेद, मुख्य उपनिषद् माण्डुक्य = अथर्व वेद, मुख्य उपनिषद् तैतरीय = कृष्ण यजुर्वेद, मुख्य उपनिषद् ऐतरेय = ऋग् वेद, मुख्य उपनिषद् छान्दोग्य= साम वेद, मुख्य

उपनिषद् बृहदारण्यक उपनिषद (10)= शुक्ल यजुर्वेद, मुख्य उपनिषद् ब्रह्म = कृष्ण यजुर्वेद, संन्यास उपिनषद् कैवल्य = कृष्ण यजुर्वेद, शैव उपनिषद् जाबाल (यजुर्वेद) = शुक्ल यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् श्वेताश्वतर = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् हंस = शुक्ल यजुर्वेद, योग उपनिषद् आरुणेय = साम वेद, संन्यास उपनिषद् गर्भ = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् नारायण = कृष्ण यजुर्वेद, वैष्णव उपनिषद् परमहंस = शुक्ल यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् अमृत-बिन्दु (20) = कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् अमृत-नाद = कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् अथर्व-शिर = अथर्व वेद, शैव उपनिषद् अथर्व-शिख = अथर्व वेद, शैव उपनिषद् मैत्रायिण = साम वेद, सामान्य उपनिषद् कौषीताक = ऋग् वेद, सामान्य उपनिषद् बृहज्जाबाल = अथर्व वेद, शैव उपनिषद् नृसिंहतापनी= अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् कालाग्निरुद्र = कृष्ण यजुर्वेद, शैव उपनिषद् मैत्रेय = साम वेद, संन्यास उपनिषद् सुबाल (30) = शुक्ल यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् क्षुरिक = कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् मान्त्रिक = शुक्ल यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् सर्व-सार = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् निरालम्ब = शुक्ल यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् शुक-रहस्य = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् वज्र-सिचू = साम वेद, सामान्य उपनिषद् तेजो-बिन्दु= कृष्ण यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् नाद-बिन्दु = ऋग् वेद, योग उपनिषद् ध्यानिबन्दु = कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् ब्रह्मविद्या (40) = कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् योगतत्व= कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् आत्मबोध = ऋग् वेद, सामान्य उपनिषद् परिव्रात् (नारदपरिव्राजक) = अथर्व वेद, संन्यास उपनिषद् त्रि-षिख = शुक्ल यजुर्वेद, योग उपनिषद् सीता = अथर्व वेद, शाक्त उपनिषद् योगचूडामिण = साम वेद, योग उपनिषद् निर्वाण = ऋग् वेद, संन्यास उपनिषद् मण्डलब्राह्मण = शुक्ल यजुर्वेद, उपनिषद् दक्षिणामूर्ति =

कृष्ण यजुर्वेद, शैव उपनिषद् शरभ (50) = अथर्व वेद, शैव उपनिषद् स्कन्द (त्रपाड्विभूटि) = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् महानारायण = अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् अद्वयतारक= शुक्ल यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् रामरहस्य = अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् रामतापिण= अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् वासुदेव = साम वेद, वैष्णव उपनिषद् मुद्गल = ऋग् वेद, सामान्य उपनिषद् शाण्डिल्य = अथर्व वेद, योग उपनिषद् पैंगल = शुक्ल यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् भिक्षुक (60) = शुक्ल यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् महत् = साम वेद, सामान्य उपनिषद् शारीरक = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् योगिशखा = कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् तुरीयातीत= शुक्ल यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् संन्यास = साम वेद, संन्यास उपनिषद् परमहंस-परिव्राजक = अथर्व वेद, संन्यास उपनिषद् अक्षमालिक = ऋग् वेद, शैव पिनषद् अव्यक्त = साम वेद, वैष्णव उपनिषद् एकाक्षर = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् अन्नपूर्ण (70) = अथर्व वेद, शाक्त उपनिषद् सूर्य = अथर्व वेद, सामान्य उपनिषद् अक्षि = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् अध्यात्मा= शुक्ल यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् कुण्डिक = साम वेद, संन्यास उपनिषद् सावित्री = साम वेद, सामान्य उपनिषद् आत्मा = अथर्व वेद, सामान्य उपनिषद् पाशुपत = अथर्व वेद, योग उपनिषद् परब्रह्म = अथर्व वेद, संन्यास उपनिषद् अवधूत = कृष्ण यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् त्रिपुरातपिन (80) = अथर्व वेद, शाक्त उपनिषद् देवि = अथर्व वेद, शाक्त उपनिषद् त्रिपुर = ऋग् वेद, शाक्त उपनिषद् कठरुद्र= कृष्ण यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् भावन = अथर्व वेद, शाक्त उपनिषद् रुद्र-हृदय = कृष्ण यजुर्वेद, शैव उपनिषद् योग-कुण्डिलिन = कृष्ण यजुर्वेद, योग उपनिषद् भस्म = अथर्व वेद, शैव उपनिषद् रुद्राक्ष = साम वेद, शैव उपनिषद् गणपित = अथर्व वेद, शैव उपनिषद् दर्शन (90) = साम वेद, योग उपनिषद् तारसार = शुक्ल

यजुर्वेद, वैष्णव उपनिषद् महावाक्य = अथर्व वेद, योग उपनिषद् पञ्च-ब्रह्म = कृष्ण यजुर्वेद, शैव उपनिषद् प्राणाग्नि-होत्र = कृष्ण यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद् गोपाल-तपिण = अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् कृष्ण = अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् याज्ञवल्क्य = शुक्ल यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् वराह = कृष्ण यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् शात्यायिन = शुक्ल यजुर्वेद, संन्यास उपनिषद् हयग्रीव (100) = अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् दत्तात्रेय= अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् गारुड = अथर्व वेद, वैष्णव उपनिषद् किल-सण्टारण = कृष्ण यजुर्वेद, वैष्णव उपनिषद् जाबाल (सामवेद) = साम वेद, शैव उपनिषद् सौभाग्य = ऋग् वेद, शाक्त उपनिषद् सरस्वती-रहस्य= कृष्ण यजुर्वेद, शाक्त उपनिषद् बृह्वच = ऋग् वेद, शाक्त उपनिषद् मुक्तिक (108) = शुक्ल यजुर्वेद, सामान्य उपनिषद्।

ऋषि याग्य्वाल्क्कि, उद्दल्का, ऐतिरिय, पिप्लाद, सनत कुमार, श्वेतकेतु, शांडिल्य, मनु, महर्षि नारद ने उप्निशादाक्य ज्ञान बाँटा है। जीव की विचार-क्षमता का आधार उपनिषद है। जो ज्ञान, विचार, सोच उपनिषद में है वह अन्य कहीं हो ही नहीं सकता। सभ्यता के आरंभिक दिनों में लिखा गया ग्रंथ विश्व के प्रत्येक देश, जाति, धर्म में उत्सुकता जगाता है।

उपनिषद के कुछ महत्वपूर्ण कथ्य उद्धृत हैं :-

ॐ असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय। ॐ शांति शांति शांतिः॥
अतिथि देवो भवः
सत्यमेव जयते

बृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार मेघगर्जना रूपी दैवी वाक् कामी, क्रोधी और लोभी स्वभाव वालों के लिए एक ही संदेश देती है। कामी व्यक्ति के लिए दमन का सन्देश है क्योंकि उसमें इन्द्रिय लोलुपता होती

है। क्रोधी और उद्दण्ड व्यक्ति के लिए दया का सन्देश है क्योंकि वह क्रूर होता है। लोभी व्यक्ति के लिए दान का सन्देश है क्योंकि दान करने से धनलोलुपता नहीं रह जाती। केन उपनिषद् में देवी-देवताओं तक को अभिमान न करने की चेतावनी दी गयी है क्योंकि उनकी शक्ति और उनका तेज घट जाने की सम्भावना होती है। वस्तुतः ब्रह्म की शक्ति और ब्रह्म का तेज ही है। कठ उपनिषद् के अनुसार इन्द्रियों की अपेक्षा उनके विषय श्रेष्ठ हैं। विषयों से मन उत्कृष्ट है, मन से बुद्धि श्रेष्ठ है और बुद्धि से महान् आत्मा उत्कृष्ट है। आत्मा से मूल प्रकृति (अव्यक्त) श्रेष्ठ है और अव्यक्त से भी परब्रह्म श्रेष्ठ है। परब्रह्म से परे कुछ भी नहीं है, वही परम गति है। सम्पूर्ण भूतों में छिपा हुआ यह आत्मा प्रकाशवान् नहीं होता। यह सूक्ष्मदर्शी पुरुषों द्वारा अपनी तीव्र और सूक्ष्मबुद्धि से ही देखा जाता है। विवेकी पुरुष वाक् इन्द्रिय (वाणी) का मन में उपसंहार करे, मन का प्रकाशस्वरूप बुद्धि में लय करे, बुद्धि को महत्व में लीन करे और महान् आत्मा को मुख्य आत्मा में नियुक्त करे। अरे अविद्याग्रस्त लोगों! उठो, जागो और श्रेष्ठ पुरुषों के समीप जाकर ज्ञान प्राप्त करो। जिस प्रकार छूरे की धार तीक्ष्ण एवं दुष्कर होती है, तत्वज्ञानी लोग उस मार्ग को वैसा ही दुर्गम बतलाते हैं।

उत्तिष्ठ जाग्रत प्राप्य वरान्नि बोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया,
दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।

वेदों के अन्तिम भाग या उच्चतम दर्शन को वेदान्त या उपनिषद् कहा जाता है। अब वेदान्त शब्द का प्रयोग उस विशेष दर्शन के लिए भी होता है जो उपनिषदों पर आधारित है। शंकर 'उपनिषद्' शब्द की व्युत्पत्ति 'सद्' धातु से मानते हैं, जिसका अर्थ है मुक्त करना, पहुँचना या नष्ट करना। यह एक विशेष्य है जिसमें 'उप' और 'नि' उपसर्ग और क्विप् प्रत्यय लगे हैं। इसके अनुसार उपनिषद् का अर्थ होता है ब्रह्मज्ञान,

जिसके द्वारा अज्ञान से मुक्ति मिलती है। जिन ग्रन्थों में ब्रह्मज्ञान की चर्चा रहती है, वे उपनिषद् कहलाते हैं। उपनिषदों में आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि एवं दार्शनिक तर्क प्रणाली दोनों के दर्शन होते हैं। श्वेताश्वतरोपनिषद् के अनुसार परमेश्वर वेदों के गुह्य भाग उपनिषदों में निहित है (तद्वेद गुह्योपनिषत्सु गूढ़ं)। उपनिषद् ऐसा साहित्य है जो आदिकाल से विकसित हो रहा है। भारतीय परम्परा में उपनिषदों की संख्या एक सौ आठ मानी गयी है। शंकराचार्य ने ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहद् आरण्यक और श्वेताश्वतर - इन ग्यारह उपनिषदों का भाष्य किया है और ये ही सर्वसुलभ हैं।

वेद का एक भाग होने से उपनिषदों का सम्बन्ध श्रुति या प्रकट हुए साहित्य से है। ये सनातन कालातीत हैं। अन्तःप्रेरित ऋषि यह घोषणा करते हैं कि जिस ज्ञान को वे प्रदान कर रहे हैं, उसका उन्होंने स्वयं आविष्कार नहीं किया है। वह उनके आगे बिना उनके प्रयत्न के प्रकट हुआ है (पुरुष प्रयत्नं बिना प्रकटीभूत)। उपनिषद् प्रतीक शैली का प्रयोग करते हुए, दिव्य दर्शन को हमारे ऊपर छोड़ा गया ईश्वर का निश्वास कहते हैं (मुण्डक 2-1-6)। श्वेताश्वतर उपनिषद् कहती है कि ऋषि श्वेताश्वतर ने अपने तप के प्रभाव और ईश्वर की कृपा से सत्य का दर्शन किया। उपनिषदें व्यवस्थित चिन्तन से अधिक आत्मिक आलोक की साधन हैं। इनमें हमें आध्यात्मिक जीवन का वर्णन मिलता है, जो भूत, वर्तमान और भविष्य में सदा एक सा है। ब्रह्मसूत्र उपनिषदों की शिक्षा का संक्षिप्त सार है। वेदान्त के महान आचार्यों ने इस ग्रन्थ पर भाष्य रचकर उनसे अपने-अपने विशिष्ट मत विकसित किये हैं।

19 उपनिषद् शुक्ल यजुर्वेद से हैं और उनका शान्तिपाठ पूर्णमदः से आरम्भ होता है।

32 उपिनषद कृष्ण यजुर्वेद से हैं और उनका शान्तिपाठ सहनाववतु से आरम्भ होता है।

16 उपनिषद् सामवेद से हैं और उनका शान्तिपाठ आप्यायन्तु से आरम्भ होता है।

31 उपनिषद् अथर्ववेद से हैं और उनका शान्तिपाठ भद्रं कर्णेभिः से आरम्भ होता है।

10 उपनिषद् ऋग्वेद से हैं और उनका शान्तिपाठ वण्मे मनिस से आरम्भ होता है।

जल में स्पंदन
करता तरंगों का सृजन
आत्मा होती सरिता सम
निर्मल मृदु मृदु अनवरत
सरिता का मिलन-समर्पण सागर से
अंतिम बंध है,
ज्यूँ अबाध जीवन मलय की गति
उपवन की सुरभित सुगंध है।
उर तो शांत जलाशय
क्यों है तरंगित
कामना की भावना से है अस्थिर
आशा की कौन सी अभिलाषा
कर गयी आत्म-मंथन से परिचित
अंतर्मन का आत्मा से मिलन।
समकालीन जीवन व्यवस्था है
मन एवं तन नहीं आधार अस्तित्व के
अस्तित्व तो अवस्था है; स्थिर चेतन आत्मा की
शक्ति-रूप, ज्ञान-रूप, आनंद-रूप आत्मा
अहैतुक, भौतिक गुणों से परे होती आत्मा,
तन के रथ पर शोभित

चंचल मन को संचालित करती रथवान सी आत्मा।
आत्मा होती अंतस प्रकाश मानव की
चिर परिचित प्राणों के स्पंदन की
अपने ही सुख से चिर चंचल मन की
शांत उर सरोवर की विचलित आत्मा,
परमात्मा-रूपी सागर में विलय को आतुर
जीवन सरिता आत्मा
मनुज है असत्य
मानव अस्तित्व है ब्रह्म
ब्रह्म-ज्योति से मिलन को व्याकुल आत्मा।

–सुरेश चौधरी 'इंदु'

(स्त्रोत : निज शोध एवं विभिन्न गूगल स्थित लेख)

प्रश्न उपनिषद

अथर्ववेद

प्रश्न उपनिषद - परिचय

प्रश्नोपनिषद भारतीय दार्शनिक परंपरा का एक अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रंथ है, जो वैदिक ज्ञान की जिज्ञासु, संवादात्मक और साधक-केन्द्रित परंपरा का श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह उपनिषद अथर्ववेद से संबद्ध है और इसे मुक्तिकोपनिषद की परंपरा में बारह प्रमुख उपनिषदों में स्थान प्राप्त है। प्रश्नोपनिषद का मूल स्वर प्रश्न-उत्तर शैली में विकसित हुआ है, जहाँ जिज्ञासा को ही ज्ञान का प्रवेशद्वार माना गया है।

1. नामकरण और संरचना

'प्रश्नोपनिषद' का नामकरण इसकी विशिष्ट संरचना से हुआ है। इस ग्रंथ में **छह साधकों** द्वारा पूछे गए **छह मौलिक प्रश्नों** का समाधान एक महर्षि गुरु द्वारा किया गया है। प्रत्येक प्रश्न जीवन, ब्रह्म, प्राण, चेतना और मोक्ष जैसे गूढ़ विषयों को स्पर्श करता है। इस प्रकार यह उपनिषद छह प्रश्नों और उनके समाधानों से निर्मित एक संगठित दार्शनिक संवाद है।

2. गुरु-शिष्य परंपरा

इस उपनिषद में गुरु **महर्षि पिप्पलाद** हैं, जिनके पास विभिन्न आश्रमों से आए साधक ज्ञान प्राप्त करने की अभिलाषा से उपस्थित होते हैं। गुरु पहले ही यह स्पष्ट कर देते हैं कि ज्ञान आकस्मिक नहीं, बल्कि तप, ब्रह्मचर्य, श्रद्धा और धैर्य से प्राप्त होता है। यह भूमिका भारतीय शिक्षा परंपरा की उस नैतिक शर्त को रेखांकित करती है, जिसमें प्रश्न पूछने से पूर्व साधना आवश्यक मानी गई है।

3. दार्शनिक विषयवस्तु

प्रश्नोपनिषद की विषयवस्तु अत्यंत व्यापक और गहन है। इसके प्रमुख विषय हैं–

- **सृष्टि की उत्पत्ति** और प्रजापति का सिद्धांत
- **प्राण का महत्व** –प्राण को समस्त इंद्रियों और जीवन का अधिष्ठाता माना गया है
- **इंद्रियाँ और मन** – उनका पारस्परिक संबंध
- **स्वप्न, जाग्रत और सुषुप्त अवस्थाएँ**
- **ओंकार (ॐ) का रहस्य** और उसकी साधना
- **पुरुष और आत्मा का स्वरूप** तथा मृत्यु के उपरांत आत्मा की गति

यह उपनिषद आत्मा को किसी अमूर्त दार्शनिक कल्पना के रूप में नहीं, बल्कि जीवित अनुभव के रूप में प्रस्तुत करता है।

4. प्रश्न-उत्तर शैली का महत्व

प्रश्नोपनिषद की सबसे बड़ी विशेषता इसकी **संवादात्मक शैली** है। यहाँ गुरु एक साथ संपूर्ण सत्य उद्घाटित नहीं करता, बल्कि शिष्य की जिज्ञासा, पात्रता और बौद्धिक परिपक्वता के अनुसार उत्तर देता है। यह शैली न केवल बौद्धिक स्पष्टता देती है, बल्कि पाठक को भी साधक की भूमिका में स्थापित कर देती है।

5. प्राण-दर्शन का वैशिष्ट्य

अन्य उपनिषदों की तुलना में प्रश्नोपनिषद में **प्राण-तत्त्व** का विवेचन विशेष विस्तार से हुआ है। प्राण को यहाँ केवल श्वास नहीं, बल्कि जीवन-ऊर्जा, चेतना और ब्रह्म-शक्ति का प्रतिनिधि माना गया है। इंद्रियाँ प्राण के अधीन हैं–यह अवधारणा भारतीय योग और आयुर्वेदिक परंपरा से भी गहराई से जुड़ती है।

6. भाषा और शैली

प्रश्नोपनिषद की भाषा सरल, सूत्रात्मक और गंभीर है। यह न तो अत्यधिक काव्यात्मक है, न ही शुष्क तर्कप्रधान। इसमें प्रतीक, उपमा और उदाहरणों के माध्यम से जटिल दार्शनिक सत्य सहज रूप में

प्रस्तुत किए गए हैं, जिससे यह ग्रंथ विद्वान और सामान्य साधक—दोनों के लिए उपयोगी बन जाता है।

7. आध्यात्मिक और व्यावहारिक महत्व

यह उपनिषद केवल मोक्ष-चिंतन तक सीमित नहीं है, बल्कि **जीवन जीने की कला** भी सिखाता है। प्राण-संयम, इंद्रिय-निग्रह, ओंकार-साधना और आत्मचिंतन—ये सभी तत्व आज के तनावग्रस्त आधुनिक जीवन में भी अत्यंत प्रासंगिक हैं।

8. उपसंहार

प्रश्नोपनिषद भारतीय आध्यात्मिक साहित्य में जिज्ञासा, अनुशासन और विवेक का अद्वितीय संगम है। यह सिखाता है कि सही प्रश्न स्वयं में आधा उत्तर होते हैं और सत्य उन्हीं को प्राप्त होता है जो श्रद्धा और धैर्य के साथ उसे जानने का साहस रखते हैं। प्रकाशन के संदर्भ में यह ग्रंथ न केवल दार्शनिक दृष्टि से, बल्कि सांस्कृतिक और शैक्षिक दृष्टि से भी अत्यंत मूल्यवान है।

आपका संकेत **पूरी तरह सही** है। अब मैं **ॐ-केन्द्रित 12 मंत्रों वाले माण्डूक्य उपनिषद** की नहीं, बल्कि अथर्ववेद से संबद्ध **''मण्डूक उपनिषद''** (Manduka / Mandukeya Upanishad) की ही बात कर रहा हूँ—

जिसमें **तीन अध्याय (खण्ड)** और **कुल 64 श्लोक** हैं।

नीचे वही **शुद्ध, शोध-संगत और प्रकाशनार्थ उपयुक्त विस्तृत भूमिका** प्रस्तुत है।

शांति पाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रुणुयाम देवा
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
हे स्वामी!
कानों से मंगल सुनूँ, आँखों से मंगल देखूँ,
आपके पूजन में सर्वदा मंगल कार्य हो,
सुदृढ़ काया हो, आयु दीर्घ हो,
सुदृढ़ अंग हो,
ताकि आपकी आराधना सक्षम हो॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति
नो बृहस्पतिर्दधातु॥
हे स्वामी!
इंद्र, पूषा, अनिष्ट, हर्ता एवं गरुड़
सा यश मुझे प्राप्त हो,
आप हमारा कल्याण करें,
प्रत्येक कामना पूर्ण हो,
आपकी परम कृपा से
आपके मार्ग को प्राप्त करूँ।
मन शांत हो, शांत हो, शांत हो॥

प्रथम प्रश्न

मन्त्रः1-3

ॐ सुकेशा च भारद्वाजः शैब्यश्च सत्यकामः सौर्यायणी च गार्ग्यः कौसल्यश्चाश्वलायनो भार्गवो वैदर्भिः कबन्धी कात्यायनस्ते हैते ब्रह्मपरा ब्रह्मनिष्ठाः परं ब्रह्मान्वेषमाणा एष ह वै तत्सर्वं वक्ष्यतीति ते ह समित्पाणयो भगवन्तं पिप्पलादमुपसन्नाः ॥1॥

हे जग स्वामी!
ॐ नाम से आपको स्मरण कर,
भरद्वाज ऋषि के पुत्र सुकेश,
शिबि राज के पुत्र सत्यकाम
गर्ग कुल शिरोमणि सौर्ययानी
विदर्भ के भार्गव
कौसल देश के कौशल्य आश्वलाय
कबन्धी कात्य ऋषि के प्रपौत्र
सर्व वेदों के परायण ऋषि
करते थे जो ब्रह्म शोध
ये छः ऋषि एक साथ पधारे
पिप्लाद ऋषि आश्रम में,
मान कर यह की ऋषि पिप्लाद
ब्रह्म विषय कहेंगे,
समिधा ले हाथों में प्रार्थना की ऋषि की तब,
मुझे भी यह प्रश्न बताओ प्रभु॥

मन्त्रः2

तन् ह स ऋषिरुवच भूय एव तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया संवत्सरं संवत्स्यथ यथाकामं प्रश्नान् पृच्छत

यदि विज्ञास्यामः सर्वं ह वो वक्ष्याम इति ॥2॥

हे नाथ!
सुन जिज्ञाषा ऋषियों की
पिप्लाद मुनि ने किया आग्रह
हे ऋषि गण!
निवास करें इस आश्रम में,
एक वर्ष पश्चात्
आपकी इच्छानुसार
दूँगा उत्तर सब प्रश्नों का क्रमानुसार ॥

मन्त्रः3

अथ कबन्धी कत्यायन उपेत्य पप्रच्छ।
भगवन् कुते ह वा इमाः प्रजाः प्रजायन्त इति ॥3॥

हे स्वामी!
आ एक वर्ष पश्चात्
पूछा कबन्धी मुनि ने
ऋषिवर पिप्लाद से,
प्रभु बताएँ कि
यह लोक कहाँ से आया
मुझे भी जिज्ञासा है यही
बतायें न आप ॥

मन्त्रः4-6

तस्मै स होवाच प्रजाकामो वै प्रजापतिः स तपोऽतप्यत
स तपस्तप्त्वा स मिथुनमुत्पादयते।
रयिं च प्रणं चेत्येतौ मे बहुधा प्रजाः करिष्यत इति ॥4॥
आदित्यो ह वै प्राणो रयिरेव चन्द्रमा रयिर्वा एतत्
सर्वं यन्मूर्तं चामूर्तं च तस्मान्मूर्तिरेव रयिः ॥5॥

अथादित्य उदयन्यत्प्राचीं दिशं प्रविशति
तेन प्राच्यान् प्राणान् रश्मिषु सन्निधत्ते।
यद्दक्षिणां यत् प्रतीचीं यदुदीचीं
यदधो यदूर्ध्वं यदन्तरा दिशो यत् सर्वं प्रकाशयति
तेन सर्वान् प्राणान् रश्मिषु सन्निधत्ते ॥6॥

हे नाथ!
पिप्लाद ऋषि बोले तब
सृष्टि के स्वामी तो हैं स्वयं आप,
संकल्प रूपी तप से रची सृष्टि आपने,
रच सृष्टि आपने
प्राण के शक्ति तत्व को किया प्रकट
सब के संग्रह से बहुरूपी सृष्टि बनाई आपने।
हे स्वामी!
आदित्य देव प्राण तत्व हैं,
सूर्य से ही पोषण जीवत्व है,
चन्द्र रच आपने स्थूल तत्व का किया पोषण,
पंचभूत का कर निर्माण
प्राण जीवन शक्ति है
इनसे बना यह जगत यही सत्य है।
हे परमात्मा!
ज्यूँ रात्रि बीतने के पश्चात् सूर्योदय होता है,
ज्यूँ सूर्योदय देख जीवन में नव-संचार होता है,
इसका प्रकाश जैसे-जैसे जग में फैलता,
वैसे-वैसे सूर्यदेव प्राण बन जीवन में प्रवेशित होते हैं
प्रभु! मेरे जीवन को भी उजास करें॥

मन्त्र:7-9

स एष वैश्वानरो विश्वरूपः प्राणोऽग्निरुदयते।
तदेतदृचाऽभ्युक्तम् ॥7॥
विश्वरूपं हरिणं जातवेदसं परायणं ज्योतिरेकं तपन्तम्।
सहस्त्ररश्मिः शतधा वर्तमानः प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः ॥8॥
संवत्सरो वै प्रजापतिस्तस्यायने दक्षिणं चोत्तरं च।
तद्ये ह वै तदिष्टापूर्ते कृतमित्युपासते ते चान्द्रमसमेव लोकमभिजयन्ते।
त एव पुनरावर्तन्ते तस्मादेत ऋषयः प्रजाकामा दक्षिणं प्रतिपद्यन्ते।
एष ह वै रयिर्यः पितृयाणः ॥9॥

हे स्वामी!
जीवमात्र के शरीर में जो जठराग्नि रहती है,
प्राण रूप में वह सूर्य स्वरूप ही है।
प्रकाश का केंद्र सूर्य है,
सब का आधार यही,
सर्वज्ञ तपते रहते वे
जो जड़ से रहते
सहस्त्रों की सहायता करते
सहस्त्रों किरणों को प्रभासित कर,
जीवन का प्राण सूर्य,
दे मेरे जीवन में प्रकाश सर्वदा॥
संवत्सर आपका ही रूप,
दो अयन से यह बना,
उत्तरायण, दक्षिणायन,
प्राण एवं रचना का रूप
सकाम भाव से भोग्य वस्तु हेतु तप करूँ मैं
जब चन्द्र की आवृत्ति पहुँचे तो कहलाए दक्षिणायन

पितृ यान मार्ग में जाऊँ मृत्युपरांत
सम्पदा रूप में सफल रहूँ कामना वाले ऋषियों सा, मैं ॥

मन्त्रः10-12

अथोत्तरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया
विद्ययाऽऽत्मानमन्विष्यादित्यमभिजयन्ते।
एतद्वै प्राणानामायतनमेतदमृतमभयमेतत् परायणमेतस्मान्न
पुनरावर्तन्त इत्येष निरोधस्तदेष श्लोकः ॥10॥
पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे अर्धे पुरीषिणम्।
अथेमे अन्य उ परे विचक्षणं सप्तचक्रे षडर आहुरर्पितमिति ॥11॥
मासो वै प्रजापतिस्तस्य कृष्णपक्ष एव रयिः शुक्लः
प्रणस्तस्मादेत ऋषयः शुक्ल इष्टं कुर्वन्तीतर इतरस्मिन् ॥12॥

हे प्रभु!
मैं पूर्ण तप श्रद्धा से नियमपूर्वक आपको पूजूँ,
विद्या प्राप्त कर सूर्य रूप प्रभु आपको जीवन
में सात करूँ,
सूर्यलोक जाते हैं उत्तर पथ के साथ
प्राण से प्राण सूर्य को अमृत निर्भय पद रहे
इस तरह साधक बन जन्मांतर पर्यंत
सूर्य रूप प्रभु की प्राप्ति निर्भाय्स्पद रहे।
पञ्चचरण हैं इस बारह देह सूर्य के
पञ्च ऋतु हैं द्वादश मास की
चरण काया के स्वर्ग उस से खड़ा,
वर्षा उनसे होती,
जग में जीवन भी उस से,
पिता सर्वपालक है,

सूर्य सात चक्र के रथ में सवार
सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के दर्शन करते।
मास हैं आप,
शुक्ल पक्ष प्राण स्वरूप,
कृष्ण पक्ष सम्पदा
शुक्ल है श्रेष्ठ
ऋषि बन शुक्ल पक्ष में यज्ञ करूँ
भोगी बन कृष्ण पक्ष में कर्म करूँ
मुझे श्रेष्ठ कर्म की अनुभूति हो॥

मन्त्रः13-16

अहोरात्रो वै प्रजापतिस्तस्याहरेव प्राणो रात्रिरेव रयिः
प्राणं वा एते प्रस्कन्दन्ति ये दिवा रत्या संयुज्यन्ते
ब्रह्मचर्यमेव तद्यद्रात्रौ रत्या संयुज्यन्ते ॥13॥
अन्नं वै प्रजापतिस्ततो ह वै तद्रेतस्तस्मादिमाः प्रजाः
प्रजायन्त इति ॥14॥
तद्ये ह वै तत् प्रजापतिव्रतं चरन्ति ते मिथुनमुत्पादयन्ते।
तेषामेवैष ब्रह्मलोको येषां तपो ब्रह्मचर्यं येषु सत्यं प्रतिष्ठितम् ॥15॥
तेषामसौ विरजो ब्रह्मलोको न येषु जिह्ममनृतं न माया चेति ॥16॥

हे प्रभु!
दिवा-रात्रि आपके ही रूप
दिवस यदि प्राण तो रात्रि सम्पदा,
दिवस जीवन शक्ति से प्रदीप्त
दिवा में स्त्री संभोग प्राण नाशक है,
रात्रि सम्भोग ब्रह्मचर्य के सम है,
दिवस के प्रकाश को प्राप्त करता रहूँ; यही यत्न रहे
विधिना ने जो नियम बनाये उसी प्रकार

ऋतुकाल में भोग हो।
अन्न रूप प्रभु आपसे ही वीर्य जग में आता,
इस वीर्य से ही जीव सृष्टि उत्पन्न होती।
प्रजा आपकी इसी भोग से पुत्र-पुत्री प्राप्त करती,
मैं ब्रह्मचर्य तप का पालन कर
आपके हृदय वास करूँ।
असत्य, कपट, छल, तृष्णा मुझमें न रहे,
ब्रह्मलोक प्राप्त करूँ जो अन्य कोई न प्राप्त कर सके॥

॥ प्रथम प्रश्न समाप्त ॥

द्वितीय प्रश्न

मन्त्रः1-3

भार्गव ऋषि ने पूछा-

अथ हैनं भार्गवो वैदर्भिः पप्रच्छ।
भगवन् कत्येव देवाः प्रचां दिधारयन्ते कतर एतत्
प्रकशयन्ते कः पुनरेषां वरिष्ठ इति ॥1॥
तस्मै स होवाचाकाशो ह वा एष देवो
वायुरग्निरापः पृथिवी वाङ् मनश्चक्षुः श्रोत्रं च।
ते प्रकाश्याभिवदन्ति वयमेतद्बाणमवष्टज़्य विधारयामः ॥2॥
तान् वरिष्ठः प्राण उवाच।
मा मोहमापद्यथ अहमेवैतत् पञ्चधाऽऽत्मानं
प्रविभज्यैतद्बाणमवष्टभ्य विधारयामीति तेऽश्रद्दधाना बभूवुः ॥3॥

हे स्वामी!
भार्गव ऋषि ने पिप्लाद मुनि से तीन प्रश्नों के उत्तर माँगे,
देव कितने जीव देह धारण करते
प्रकाशित करते
इन सब में यह काया कैसे बनी,
इन सब में श्रेष्ठ कौन?
ये ही प्रश्न मेरे भी,
प्रभु दें उत्तर आप।
पिप्लाद मुनि ने तब कहा,
पंचभूत से बनी यह देह
विभिन्न तत्वों से बनी यह देह
धारण करते सब
नयन, कर्ण, ज्ञानेन्द्रियाँ,

और उनमे कर्मेन्द्रियाँ
जो चालित सब मन से,
चौदह देवता धारण करते
प्रकाशित इस देह को,
इस विधि देह हम धारण कर
देवधि देव में विवाहित होते।
तब सर्वश्रेष्ठ प्राण धारी ने बतलाया,
मोह माया में पड़ हम धारण करते यह देह
जो की पञ्च प्राणों में बसी,
रक्षा करती काया परन्तु न मानूँ
विश्वास न कर, अभिमान ही करता रहूँ॥

मन्त्रः4-6

सोऽभिमानादूर्ध्वमुत्क्रामत इव तस्मिन्नुत्क्रामत्यथेतरे सर्व
एवोत्क्रामन्ते तस्मिश्च प्रतिष्ठमाने सर्व एव प्रतिष्ठन्ते।
तद्यथा मक्षिका मधुकरराजानमुत्क्रामन्तं सर्व एवोत्क्रमन्ते
तस्मिष्च प्रत्ष्ठमाने सर्व एव प्रतिष्टन्त एवम्
वाङ् मनष्चक्षुः श्रोत्रं च ते प्रीताः प्राणं स्तुन्वन्ति॥4॥
एषोऽग्निस्तपत्येष सूर्य एष पर्जन्यो मघवानेष वायुः
एष पृथिवी रयिर्देवः सदसच्चामृतं च यत्॥5॥
अरा इव रथनाभौ प्राणे सर्वं प्रतिष्ठितम्।
ऋचो यजूँषि सामानि यज्ञः क्षत्रं ब्रह्म च॥6॥

हे प्रभु!
अभिमान वश प्राण जब देह से होता निष्कासित,
गर्व हर देव के भंग हों
प्राण ही प्रमुख है प्रकाशित,
स्वत्व प्रभुता प्राण की है

रीति अनुसार से
नेत्र, कर्ण, मन, वाणी इन्द्रियाँ भी स्तुति करती प्राण की हैं।
प्राण ही तप्त अग्नि में,
प्राण ही मेघ वायु इंद्र है
पृथ्वी, सम्पदा, देव, भी यह प्राण है,
सत्य असत्य यही बताये,
यही अमृतमयी रूप आपका
स्वस्ति भी यह जग माय प्राण हैं।
रथ चक्र नाभि के अधीन हैं
प्राण सर्व स्थान प्रतिष्ठित
ऋग, साम, यजुः की पवित्र ऋचाएं
यज्ञ ज्यूँ ब्राह्मण क्षत्रिय करें
प्राण ही उनका आधार है
मुझे भी जीवन सञ्चालन आधार दें॥

मन्त्रः7-10

प्रजापतिश्चरसि गर्भे त्वमेव प्रतिजायसे।
तुभ्यं प्राण प्रजास्त्वमा बलिं हरन्ति यः प्रणैः प्रतितिष्ठसि॥7॥
देवानामसि वह्नितमः पितृणां प्रथमा स्वधा।
ऋषीणां चरितं सत्यमथर्वाङ्गिरसामसि॥8॥
इन्द्रस्त्वं प्राण तेजसा रुद्रोऽसि परिरक्षिता।
त्वमन्तरिक्षे चरसि सूर्यस्त्वं ज्योतिषां पतिः॥9॥
यदा त्वमभिवर्षस्यथेमाः प्राण ते प्रजाः।
आनन्दरूपास्तिष्ठन्ति कामायान्नं भविष्यतीति॥10॥

हे प्राण देव!
ईश्वर स्वरूप देव, आप ही प्रजापति,
गर्भ में भी आप ही विचरते,

मात-पिता के अनुरूप,
आप ही शिशु रूप में जन्मते,
मैं आपकी स्तुति करता हूँ,
आपको भेंट प्रस्तुत करता हूँ,
सब प्राणियों में आप ही आप हैं
आपसे सबका अस्तित्व है।
तू देवों का मानक देव अग्नि है,
पितरों को समर्पित होने वाली प्रथम समिधा है,
पंचाग्नि है, अथर्वांगिरस ऋषियों का सत्य
अनुभव तू ही है,
आप बिन जग मृत्यु है,
आप मुझमें प्राण तत्व बन विराजें।
आप तेजस्वि इंद्र हैं, रक्षक रूद्र हैं
आकाश पर सूर्य भौम आप ही हैं,
शशि, भू, तारक, अंतरिक्ष अनल आप ही हैं,
पोषक बन मेरा कल्याण करें।
मेघ रूप में धरा को सिंचित कर समुचित तृप्त करते,
पर्याप्त अन्न दे प्रजा को संतप्त करते,
मुझे भी आप जीवन निर्वाह का
आनंदमय उपाय बताएँ॥

मन्त्रः11-13

व्रात्यस्त्वं प्राणैकर्षरत्ता विश्वस्य सत्पतिः।
वयमाद्यस्य दातारः पिता त्वं मातरिश्व नः॥11॥
या ते तनूर्वाचि प्रतिष्ठिता या श्रोत्रे या च चक्षुषि।
या च मनसि सन्तता शिवां तां कुरू मोत्क्रमीः॥12॥

प्राणस्येदं वशे सर्वं त्रिदिवे यत् प्रतिष्ठितम्।
मातेव पुत्रान् रक्षस्व श्रीश्च प्रज्ञां च विधेहि न इति॥13॥
हे नाथ!
संस्कार से रहित होकर भी स्वभाव से अति शुद्ध हैं,
सबको आप पवित्र करते हैं,
सर्वश्रेष्ठ ऋषि आप ही हैं,
मैं आपको भोजन दे आपका पोषण करूँ,
आप समस्त जग स्वामी,
आप ही पिता रूप में वास करें।
मन वचन श्रोत्र नेत्र का रूप आप हैं,
इन्द्रियों के अंतःकरण को शांत रखें,
मुझे कल्याणमय रखें,
उत्क्रमण न हो बस यही दया करें।
स्वर्गलोक एवं इस जग में जो भी दीखता
सब आपके अधीन,
प्रभो माँ सदृश रक्षा करें,
कान्ति दें, प्रज्ञा दें, श्री दें, कार्य क्षमता दें॥

॥ द्वितीय प्रश्न समाप्त ॥

तृतीय प्रश्न

मन्त्रः1-3

आश्वलायन ऋषि पूछ रहे।

अथ हैनं कौशल्यष्चाश्वलायनः पप्रच्छ।
भगवन् कुत एष प्राणो जायते कथमायात्यस्मिञ्शरीर
आत्मानं वा प्रविभज्य कथं प्रतिष्ठते
केनोत्क्रमते कथं बह्यमभिधते कथमध्यात्ममिति ॥1॥
तस्मै स होउवाचातिप्रष्चान् पृच्छसि
ब्रह्मिष्ठोऽसीति तस्मात्तेऽहं ब्रवीमि ॥2॥
आत्मन एष प्राणो जायते।
यथैषा पुरुषे छायैतस्मिन्नेतदाततं
मनोकृतेनायात्यस्मिञ्शरीरे ॥3॥

हे नाथ!
प्रश्न जो पूछा
आश्वलायन ऋषि ने
वही जिज्ञासा मेरी भी
प्राण जन्म लेता कहाँ से,
यह शरीर में कैसे करते प्रवेश,
यह कैसे रहता इस देह में,
यह देह से कैसे निकलता,
फिर जाता कहाँ
यह कैसे मन इन्द्रियों का जग में धारण कर
करता भला,
बतलायें प्रभु।

पिप्लाद ऋषि बतला रहे-

प्रश्न अतिउत्तम है,

हे श्रद्धालु प्रेमी!
उत्तर दे रहा मैं
साधक बन सुन जरा।
यह देह तो छाया है, प्राण परमात्मा
परमात्मा ही इसे रचते,
यह अधीन परमात्मा के,
मृत्यु समय जैसी रहती भावना,
देह में प्राण भी जाते ले वही कामना।

मन्त्रः4-6

यथा सम्रादेवाधिकृतान् विनियुङ् क्ते।
एतन् ग्रामानोतान् ग्रामानधितिष्टस्वेत्येवमेवैष
प्राण इतरान् प्राणान्
पृथक्
पृथगेव सन्निधत्ते पायूपस्थेऽपानं चक्षुःश्रोत्रे
मुखनासिकाज़्यां
प्राणः स्वयं प्रातिष्टते मध्ये तु समानः।
एष ह्येतद्धुतमन्नं समं नयति तस्मादेताः सप्तार्चिषो भवन्ति॥4-5॥
हृदि ह्येष आत्मा।
अत्रैतदेकशतं नाडीनं तासां शतं शतमेकैकस्या
द्वासप्ततिर्द्वासप्ततिः प्रतिशाखानाडीसहस्त्राणि
भवन्त्यासु व्यानश्चरति॥6॥

हे स्वामी!
ज्यूँ कोई सम्राट निज अधिकारियों को
भिन्न-भिन्न स्थान पर दायित्व दे रखता है,
वैसे ही मुख्य प्राण अन्य प्राणों को
विभिन्न स्थल में रख

दायित्व प्रदान करता है।
स्वयं मुख्य प्राण
नेत्र, कर्ण, मुख, नासिका में रहता विद्यमान
अपान प्राण गुदा में हो उपस्थित
मूत्र, मल निकास करते,
देह मध्य में रह अन्न का पोषण करते,
ये समस्त देह में तत्व का वितरण करते,
यह अन्न रस बन सातों द्वार से शक्ति प्राप्त करता,
नेत्र, कर्ण, नासिका, जिह्वा ये सात द्वार कहलाते।
जीवात्मा इस हृदय में रहता,
हृदय नाड़ियों से है,
एक-एक तनी शाखाएँ हैं नाड़ी बनती,
हरेक शाखा नाड़ियों की होती संख्या बहत्तर हज़ार,
प्रत्येक शाखा नाड़ी में व्यान वायु करती प्रसार॥

मन्त्रः7-9

अथैकयोर्ध्व उदानः पुण्येन पुण्यं लोकं नयति
पापेन पापमुभाभ्यामेव मनुष्यलोकम् ॥7॥
आदित्यो ह वै बाह्यः प्राण उदयत्येष ह्येनं चाक्षुषं प्राणमनुगृह्णानः।
पृथिव्यां या देवता सैषा पुरुषस्य
अपानमवष्टज़्यान्तरा यदाकाशः स समानो वायुर्व्यानः ॥8॥
तेजो ह वा उदानस्तस्मादुपशान्ततेजाः।
पुनर्भवमिन्द्रियैर्मनसि सम्पध्यमानैः ॥9॥
हे स्वामी!
सुषुम्ना नाड़ी हृदय से मस्तक तक जाती,
वायु प्रवाहित होती उदान, ऊपर को आती
पुण्य वालों को यह स्वर्ग ले जाती

पापी को पाप योनि से नरक में,
मुझ जीवात्मा को मन इन्द्रियों सह
उदान प्राण अन्य देह में ले जाएँ न।
वाह्य प्राण तो सूर्य सर्वदा,
जहाँ सूर्य प्रकाश
वहाँ नेत्र प्रकाशित
प्राण कृपा करते,
पृथ्वी में शक्ति जो रहती वह
अपान स्थिर रखती,
आकाश भू पर समान रह
व्यान वायु रूप रखती।
उदान सूर्य तेज़ सम,
अग्नि जो काया को न होने दे शीतल
इसकी ऊष्मा देह को रखे सजीव,
अतः जब उदान निष्काषित होती,
तेजहीन हो देह, शीतल सत्वर हो जाती है॥

मन्त्रः10-12

यच्चित्तस्तेनैष प्राणमायाति।
प्राणस्तेजसा युक्तः सहात्मना तथासङ्कल्पितं लोकं नयति॥10॥
य एवं विद्वान् प्राणं वेद न हास्य प्रजा
हीयतेऽमृतो भवति तदेषः श्लोकः॥1॥
उत्पत्तिमायतिं स्थानं विभुत्वं चैव पञ्चधा।
अध्यात्मं चैव प्राणस्य विज्ञायामृतमश्नुते
विज्ञायामृतमश्नुत इति॥12॥

हे नाथ!
मृत्यु के समय जो रहता संकल्प,

उदान वायु वही संकल्प ले
मन इन्द्रियों के साथ प्राण में विलीन होती,
मुख्य प्राण उदान को ले आत्मा में
विभिन्न लोकों में ले जाते जीवात्मा को।
प्राण सर्वदा रखा करते,
रहस्यमय होते ये प्राण
अमृत सम जीवन मय रहे
अमर बने ये प्राण।
प्राण की उत्पत्ति
इसका प्रवेश जो जान जाये
वाह्य प्राण को जो जान जाय
वह अमृत मय हो जाय,
मुझे यह ज्ञान मिले, मैं अमृत मय हो जाऊँ॥

॥ इति तृतीय प्रश्न ॥

चतुर्थ प्रश्न

मन्त्रः1-2

अथ हैनं सौर्यायणि गार्ग्यः पप्रच्छ।
भगवन्नेतस्मिन् पुरुषे कानि स्वपन्ति कान्यस्मिञ्जाग्रति
कतर एष देवः स्वप्नान् पश्यति कस्यैतत्
सुखं भवति कस्मिन्नु सर्वे सम्प्रतिष्ठिता भवन्तीति ॥1॥
तस्मै स होवच। यथ गार्ग्य मरीचयोऽर्कस्यास्तं
गच्छतः सर्वा एतस्मिंस्तेजोमण्डल एकीभवन्ति।
ताः पुनः पुनरुदयतः प्रचरन्त्येवं ह वै तत् सर्वं परे देवे
मनस्येकीभवति तेन तर्ह्येष पुरुषो न शृणोति
न पश्यति न जिघ्रति न रसयते न स्पृशते नाभिवदते
नादत्ते नानन्दयते न विसृजते नेयायते स्वपितीत्याचक्षते ॥2॥

हे प्रभु!
गर्ग के वंशज सौर्यवानी ऋषि ने
प्रश्न किया अनुपम,
पिप्लाद मुनि बताएँ आप इस देह में
कौन विद्यमान है, जो सोता है, जागता है?
कौन देखता है, स्वप्न?
कौन निंद्रा में अनुभव करता?
हे देव, कौन आश्रित रहता?
सर्वदेव प्रभु आप तो स्थित हैं ही,
फिर कौन आधार है?
मेरी इस जिज्ञाषा को करें शांत॥

पिप्लाद मुनि ने प्रेमवश यूँ कहा-

किरणें सूर्य उगने पर ही मिलती,

उसी भाँति निंद्रा मनुज की इन्द्रियों में रहती,
परमदेव मन में एक बनें,
इस प्रकार कार्य नहीं कराते
जीव न तो सोता है, न ही देखता है, न ही सुनता है,
न ही सूँघता है, न स्वाद लेता है,
स्पर्श कर कहता भी नहीं, न मैथुन ही करता,
न मल-मूत्र त्यागता,
न ही चलता,
जग कहता मनुज तो सोता,
आप ही कार्य करते सारे
मेरे सब कार्य आप ही पूरे कराओ॥

मन्त्रः3-4

प्राणाग्नय एवैतस्मिन् पुरे जाग्रति।
गार्हपत्यो ह वा एषोऽपानो व्यानोऽन्वाहार्यपचनो
यद्गार्हपत्यात् प्रणीयते प्रणयनादाहवनीयः प्राणः॥3॥
यदुच्छ्वासनिःश्वासावेतावाहुती समं नयतीति स समानः।
मनो ह वाव यजमानः। इष्टफलमेवोदानः।
स एनं यजमानमहरहर्ब्रह्म गमयति॥4॥

हे जगदीश्वर!
मेरे पञ्च प्राण में अग्नि को
मुख्य रूप से देह में जगाओ,
निंद्रा रूप यज्ञ में प्राण अकेला ही जगे
अपान अग्नि है ग्राह्य
व्यान दक्षिण अग्नि है
व्यान से उठ प्राण अग्नि को
मैं अपने यज्ञ में आह्वान करता हूँ,

व्यान से प्राण प्रकट होकर
मेरे प्राण ही कहलायें।
मेरे श्वास श्वास में सर्वदा
यज्ञ की आहुति चलती रहे
इस आहुति से मेरी देह को पोषक तत्व मिलते रहें,
इन तत्वों से सम भाव से सम वायु पहुँचे,
इससे मन को यज्ञ यजमान बनाये
मेरा मन उदान के साथ मिल हृदय गुहा में वास करें,
यह मेरी जीवात्मा मन द्वारा निंद्रा सुख की अनुभूति करें,
यही अनुभव प्रत्येक दिन मिलता रहे॥

मन्त्रः5-8

अत्रैष देवः स्वप्ने महिमानमनुभवति।
यद्दृष्टं दृष्टमनुपश्यति श्रुतं श्रुतमेवार्थमनुशृणोति
देशदिगन्तरैश्च प्रत्यनुभूतं पुनः पुनः
प्रत्यनुभवति दृष्टं चादृष्टं च श्रुतं चाश्रुतं चानुभूतं चाननुभूतं
च स्च्चासच्च सर्वं पश्यति सर्वः पस्यति॥5॥
स यदा तेजसाऽभिभूतो भवति।
अत्रैष देवः स्वप्नान्न पश्यत्यथ यदैतस्मिञ्शरीर
एतत्सुखं भवति॥6॥
स यथा सोभ्य वर्यांसि वसोवृक्षं संप्रतिष्ठन्ते।
एवं ह वै तत् सर्वं पर आत्मनि संप्रतिष्ठते॥7॥
पृथिवी च पृथिवीमात्रा चापश्चापोमात्रा च तेजश्च तेजोमात्रा
च वायुश्च वायुमात्रा चाकाशश्चाकाशमात्रा
च चक्षुश्च द्रष्टव्यं च श्रोत्रं च श्रोतव्यं च ग्राणं
च घ्रातव्यं च रसश्च रसयितव्यं च त्वक्च स्पर्शयितव्यं
च वाक्च वक्तव्यं च हस्तौ चादातव्यं चोपस्थश्चानन्दयितव्यं

च पायुश्च विसर्जयितव्यं च यादौ च गन्तव्यं च मनश्च मन्तव्यं च बुद्धिश्च बोद्धिव्यं चाहङ्कारश्चाहङ्कर्तव्यं च चित्तं च चेतयितव्यं च तेजश्च विद्योतयितव्यं च प्राणश्च विद्यारयितव्यं च ॥8॥

हे नाथ!
मैं जीवात्मा रूप स्व-संस्कारों को स्वप्न में देखता हूँ,
देख कर देखता, सुन कर सुनता हूँ,
भिन्न-भिन्न स्थल में जो विषय अनुभूत होता है,
पुनः पुनः उसे अनुभव करता हूँ,
भिन्न-भिन्न भांति जिसे देखता हूँ,
उसे भली प्रकार सुन,
सत्य असत्य की विवेचना करता हूँ।
मन जो अधीन है, उसमें उदान वायु रहती,
तब मन द्वारा मैं स्वप्न की घटना नहीं देख सकता
तब मुझे सुषुप्ति सुख का अनुभव हो,
मुझे भोग्य हर स्थिति सुखमय हो।
ज्यूँ गगन में विचरण करते पक्षी,
रात्रि आने पर वृक्ष पर निवास करते हैं,
वैसे ही मैं बंधा तत्व स्वरूप
आपके आश्रय में रहूँ।
पृथ्वी को पृथ्वी की मात्रा, जल को रस की,
तेज को तेज की, वायु व आकाश को स्पर्श व
शब्द की तन्मात्रा,
नेत्र को दृश्य पदार्थों की मात्रा,
कर्ण को श्रोत्रिय विषयक मात्रा,
नासिका को सुगंध,
जिव्हा, त्वचा को स्पर्श स्वाद की तन्मात्रा,

वाणी, शब्द, हाथ की वस्तु रहे,
उपस्थ विषय रहे,
गुदा से मल, उस स्थान से ही जावे,
मन बुद्धि को चित आश्रय रहे,
मुझे परमात्मा सर्वदा तन्मात्राओं के साथ रखे।

मन्त्रः9-11

एष हि द्रष्ट स्प्रष्टा श्रोता घ्राता रसयिता
मन्ता बोद्धा कर्ता विज्ञानात्मा पुरुषः।
स परेऽक्षर आत्मनि संप्रतिष्ठते॥9॥
परमेवाक्षरं प्रतिपद्यते स यो ह वै
तदच्छायमशरीरऽलोहितं शुभ्रमक्षरं वेदयते यस्तु सोम्य।
स सर्वज्ञः सर्वो भवति। तदेष श्लोकः॥10॥
विज्ञानात्मा सह देवैश्च सर्वैः प्राणा भुतानि संप्रतिष्ठन्ति यत्र
तदक्षरं वेदयते यस्तु सोम्य स सर्वज्ञः सर्वमेवाविवेशेति॥11॥

हे प्रभु!
देख कर, सुन कर, स्पर्श कर,
सूँघ कर, चख कर, मनन कर,
मैं सब कार्य करूँ,
ज्ञान रूप जीवात्मा स्वीकार्य रहूँ,
अविनाशी परमात्मा आपके
आश्रय में सर्वदा रहूँ,
आप बिना कोई नहीं
कोई शांति नहीं
कोई आधार नहीं।
जिनकी देह की छाया नहीं,
न जिन का रूप रंग कोई,

उस परमात्मा को प्राप्त करूँ मैं,
साधक बन सर्व ज्ञान मिले,
सर्व रूप मिले,
शुभ अक्षर मन चाहे सम्बन्ध एक ही आवे।
विज्ञान आत्मा सह देवों के
पञ्च भूतों व् पञ्च प्राण के अंतर के,
सब इन्द्रियों के साथ
जिसमें आत्मा वास करती है,
वे मेरे प्राण रूप परमात्मा हैं,
सर्वरूप, सर्व ज्ञाता, ब्रह्म वे एक मात्र हैं,
मेरे हृदय में पूर्ण रूपेण वास करें॥

॥ इति चतुर्थ प्रश्न ॥

पंचम प्रश्न

मन्त्रः1-3

अथ हैनं सैब्यः सत्यकामः पप्रच्छ।
स यो ह वै तभ्दगवन्मनुष्येषु
प्रायणान्तमोङ्कारमभिध्यायीत।
कतमं वाव स तेन लोकं जयतीति। तस्मै स होवाच ॥1॥
एतद्वै सत्यकाम परं चापरं च ब्रह्म यदोङ्कारः।
तस्माद्विद्वानेतेनैवायतनेनैकतरमन्वेति ॥2॥
स यध्येकमात्रमभिध्यायीत स तेनैव
संवेदितस्तूर्णमेव जगत्याभिसंपध्यते।
तमृचो मनुष्यलोकमुपनयन्ते स तत्र तपसा
ब्रह्मचर्येण श्रद्धयासंपन्नो महिमानमनुभवति ॥3॥

हे जगत पति!
सत्यकाम ने पूछा
मैं जगदीश ॐकार की उपासना करता रहूँ,
जीवन पर्यंत मृत्यु तक मैं उन्हें पूजता रहूँ,
मुझे योग्य लोक में कैसे वास मिले,
मैं शुभ फलों को कैसे प्राप्त करूँ।
हे सत्यकाम! कहा पिप्लाद मुनि ने,
ब्रह्म ही ॐकार रूप हैं,
जगत में जो जिस भाँति करता कामना
ॐकार की होती प्राप्ति उसे वैसी,
विराट जग का भोग सहस्त्रों पाते,
मुझे मेरे प्रभु की इच्छानुसार भोग प्राप्त हो।
आपके आदेशानुसार
ज्ञात हो रहा ॐ की प्रथम मात्रा का भाष्य

पृथ्वी में आसक्त जन ही करते भोग की कामना,
मृत्युपरांत वे मृत्यु लोक में कर्मानुसार भोग भोगते
प्रथम मात्रा ॐकार की पृथ्वी से है बँधी,
ऋग वेद की ऋचाएँ, ऋचारूप मनुष्य देह से सम्बंधित
इस देह में आपकी कृपा से
नियमों का करूँ पालन,
तप श्रद्धा सदा रहे कर्म में,
श्रेष्ठ मनुज बन
श्रेष्ठ भोग अर्जित करूँ।

मन्त्रः4-5

अथ यदि द्विमात्रेण मनसि संपद्यते
सोऽन्तरिक्षं यजुर्भिरुन्नीयते सोमलोकम्।
स सोमलोके विभुतिमनुभूय पुनरावर्तते ॥4॥
यः पुनरेतं त्रिमात्रेणोमित्येतेनैवाक्षरेण परं
पुरुषमभिध्यायीत स तेजसि सूर्ये संपन्नः।
यथा पादोदरस्त्वचा विनिर्भुच्यत एवं ह वै स पाप्मना विनिर्भुक्तः स
सामभिरुन्नीयते ब्रह्मलोकं स एतस्माज्जीवघनात् परात्परं
पुरुशयं पुरुषमीक्षते। तदेतौ श्लोकौ भवतः ॥5॥

हे प्रभु!
मैं ॐकार की दूसरी मात्रा का ध्यान करता रहूँ,
चंद्रलोक हैं जो स्वर्ग सामान उसे प्राप्त करूँ,
यजुर्वेद है मात्रा दूसरी
मैं यजुर्वेद का पाठ कर सिद्धि प्राप्त करूँ,
भोग भोगने चंद्रलोक से मृत्युलोक आऊँ पर,
उपासना पूर्ण कर पुण्य प्राप्त कर
कर्म अनुसार अन्य योनी प्राप्त करूँ।

ॐकार गुंजन से आपको पूजता रहूँ,
शापित देह छोड़ पाप से मुक्ति पाऊँ
सूर्यलोक प्राप्त कर सामवेद सुनता रहूँ
ब्रह्म लोक में आपके निकट पहुँच जाऊँ
जीव तत्व से श्रेष्ठ अंतर्यामी परमात्मा
इस जग को धारण करने वाले
आपका साक्षात् कार हो
बस यही अभिलाषा॥

मन्त्रः6-7

तिस्रो मात्रा मृत्युमत्यः प्रयुक्ता अन्योन्यसक्ताः अनविप्रयुक्ताः।
क्रियासु बाह्याभ्यन्तरमध्यमासु सम्यक् प्रयुक्तासु न कम्पते ज्ञः॥6॥
ऋग्भिरेतं यजुर्भिरन्तरिक्षं सामभिर्यत् तत् कवयो वेदयन्ते।
तमोङ्कारेणैवायतनेनान्वेति विद्वान्
यत्तच्छान्तमजरममृतमभयं परं चेति॥7॥

हे जगदीश्वर!
ॐकार की तीनों मात्राओं का
अलग-अलग वाचन
मन्त्रों के साथ करता रहूँ,
प्रत्युक्त पदार्थ मृत्यु को तेजोमय करे,
हर समय ॐकार उच्चाटन करता रहूँ।
पहली मात्रा की उपासना से
मृत्यु लोक या मनुष्यलोक मिलता,
दूसरी मात्रा का पूजन चंद्रलोक दिलाता,
परन्तु मैं ओमकार का उच्चाटन करूँ मात्र
आपकी प्राप्ति हेतु,

तीसरी मात्रा को भजूँ तो
ज्ञान प्राप्त हो एवं ब्रह्मलोक प्राप्त हो
मुझमें विवेक जगे, साधक बन ओमकार जपूँ
आपको प्राप्त कर जन्म-मृत्यु चक्र से निवृत होऊँ॥

॥ इति पंचम प्रश्न ॥

षष्टम प्रश्न

मन्त्रः1-3

भगवन् हिरण्यनाभः कौसल्यो राजपुत्रो मामुपेत्यैतं प्रश्नमपृच्छत।
षोडशकलं भारद्वाज पुरुषं वेत्थ। तमहं कुमारम्ब्रुवं नाहमिमं वेद।
यध्यहमिममवेदिषं कथं ते नावक्ष्यमिति।
समूलो वा एष परिशुष्यति योऽनृतमभिवदति
तस्मान्नार्हम्यनृतं वक्तुम्।
स तूष्णीं रथमारुह्य प्रवव्राज। तं त्वा पृच्छामि क्वासौ पुरुष इति ॥1॥
तस्मै स होवाच।
इहैइवान्तःशरीरे सोभ्य स पुरुषो यस्मिन्नताः
षोडशकलाः प्रभवन्तीति ॥2॥
स ईक्षाचक्रे।
कस्मिन्नहमुत्क्रान्त उत्क्रान्तो भविष्यामि
कस्मिन्वा प्रतिष्ठिते प्रतिष्ठस्यामीति ॥3॥

हे हिरण्यनाभ!
कोशल राजकुमार ने पूछा प्रश्न इस प्रकार,
सोलह कलाओं से उत्पन्न पुरुष कौन हैं प्रभु बतलाएँ
मुझे निराश न करें शीघ्र ज्ञात कराएँ
जान कर असत्य कदापि न बोलूँ
न ही नाश का भागी बनूँ
इस प्रकार राजकुमार
चुपचाप बैठ रथ पर गए
अतः आज पूछ रहा कौन पुरुष है सोलह
कलाओं वाला।
पिप्लाद ऋषि ने कहा
पिप्लाद मुनि ने जो बताया वह ज्ञान मुझमें अर्जित हो,

पुरुष जो सोलह कलाओं वाला वह है देह के अन्दर,
यह कलाएं जग में प्रकट हैं।
आपने यह सोच पहले जग की कर दी रचना,
जिसमें रहते हुए तत्व रूप में दीखते,
जगत धरा में तत्व जाते,
हमारी स्थिति नहीं रहती तब,
तत्व के रहने से ही जग में सत्ता व्यक्त रहती।

मन्त्रः4-5

स प्राणमसृजत प्राणाच्छ्रद्धां खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवीन्द्रियं मनः।
अन्नमन्नाद्वीर्यं तपो मन्त्राः कर्म लोका लोकेषु च नाम च ॥4॥
स यथेमा नध्यः स्यन्दमानाः समुद्रायणाः समुद्रं प्राप्यास्तं
गच्छन्ति भिध्येते तासां नामरूपे समुद्र इत्येवं प्रोच्यते।
एवमेवास्य परिद्रष्टुरिमाः षोडशकलाः पुरुषायणाः पुरुषं
प्राप्यास्तं गच्छन्ति भिध्येते चासां नामरूपे पुरुष इत्येवं
प्रोच्यते स एषोऽकलोऽमृतो भवति तदेष श्लोकः ॥5॥

हे नाथ!
सोच विचार कर रची कलाएँ इस प्रकार,
पहले रचा प्राण
फिर
कर्म, श्रद्धा, व्योम, वायु, तेज़, वारि, पृथ्वी, इन्द्रिय, मन
फिर की आपने अन्न की रचना जिससे बना वीर्य
तप कर्म मन्त्रों को रच इस लोक व् नाम को रचा,
फिर इन सोलह कलाओं से युक्त यह ब्रह्माण्ड रचा,
इस ब्रह्माण्ड में सोलह कलाओं वाले पुरुष को रचा
देह के कई विभाग बनाए,
ज्यूँ सागर की दिशा में जाने वाली समस्त नदियाँ

सागर में ही समाहित होती हैं,
और वे सागर ही कहलाती हैं,
उनका अपना अस्तित्व समाप्त हो जाता है,
इसी प्रकार जग की सोलह कलाएं
प्रलय काल में आपमें लुप्त हो जाती हैं
नश्वर प्रभु आप इसीलिए कहलाते,
अतः सोलह कलाओं से पूर्ण तो मात्र आप हैं प्रभु॥

मन्त्रः6-7

अरा इव रथनाभौ कला यस्मिन्प्रतिष्ठिताः।
तं वेध्यं पुरुषं वेद यथ मा वो मृत्युः परिव्यथा इति॥6॥
तान् होवाचैतावदेवाहमेतत् परं ब्रह्म वेद।
नातः परमस्तीति॥7॥

हे स्वामी!
रथ की नाभि सम समस्त कलाएँ
आपमें ही वास करती हैं,
प्रभु आपको हृदय में निवास कर,
मृत्यु के दुःख से निवृत रहूँ।
पिप्लाद मुनि ने तब कहा,
जितना पूछा गया
उतना बतलाया मैंने,
ब्रह्म विषय से श्रेष्ठ कुछ नहीं,
आज यह आप जान लीजिये॥

मन्त्रः8

ते तमर्चयन्तस्त्वं हि नः पिता योऽस्माकमविध्यायाः
परं परं तारयसीति। नमः परमऋषिज़्यो नमः परमऋषिज़्यः॥8॥

हे स्वामी!

सभी छः ऋषियों ने किया पूजन
पिप्लाद ऋषि को किया नमन
सत्य पिता आप हैं
आपने अज्ञान से निकाल कर
ज्ञान दिया
नमन आपको, वंदन आपको॥

॥ इति अर्थववेद रचित प्रश्न उपनिषद॥

मण्डूक उपनिषद

अथर्ववेद

मण्डूक उपनिषद - परिचय

मुण्डक उपनिषद मुख्य दस उपनिषदों में से एक है, जो अथर्व वेद से लिया गया है, इसमें 64 श्लोक हैं जो तीन अध्याय में बँटे हैं, जो पुनः कई खण्डों में बँटे हैं। मुंड का अर्थ केश विहीन होता है एवं प्राचीनकाल में साधुजन केश नहीं रखते थे एवं मात्र शिखा रखते थे अतः मुण्डक वहां से उद्धृत है। कुछ लोगों का मंतव्य है कि माया रूपी केश का मुंडन इस उपनिषद को पढ़ने से होता है अतः यह मुण्डक है। कुछ भी हो गहरे विचार एवं रहस्य से अनूदित यह शास्त्र अभूतपूर्व है। परा ज्ञान, स्वयं को जागृत करने हेतु एवं अपरा ज्ञान सांसारिक वस्तुओं के हेतु बताया गया है। जब शौनक ऋषि अंगीरा के पास पहुँच कर पूछते हैं कि क्या जानने से सब कुछ जान जायेंगे, तब अंगीरा कहते हैं कि परा एवं अपरा ज्ञान ही सब बता सकता है। कर्म संन्यास को बतलाता है यह उपनिषद जो की स्व-अध्याय की सोपान है। लालसा, मनोकामना, पुनर्जन्म आदि को परिभाषित करता यह उपनिषद अद्वितीय है। ''**सत्यमेव जयते**'' इसी उपनिषद के श्लोक 3-1-6 से लिया गया है।

मण्डूक उपनिषद अथर्ववेद से संबद्ध एक महत्वपूर्ण उपनिषद है, जो उपनिषदिक साहित्य की **संन्यास-परंपरा** का प्रतिनिधि ग्रंथ माना जाता है। यह उपनिषद आकार में मध्यम होते हुए भी विषय-वस्तु की दृष्टि से अत्यंत गंभीर, वैराग्यपूर्ण और मोक्षोन्मुख है। संरचनात्मक रूप से यह उपनिषद **तीन अध्यायों (खण्डों)** में विभक्त है तथा इसमें **कुल 64 श्लोक** प्राप्त होते हैं।

यह उपनिषद उस कालखंड का प्रतिनिधित्व करता है जब उपनिषदिक चिंतन कर्मकाण्ड और यज्ञप्रधान वैदिक परंपरा से आगे बढ़कर त्याग, **वैराग्य और आत्मबोध** को जीवन का परम लक्ष्य घोषित कर चुका था।

'मण्डूक' शब्द को लेकर विद्वानों में विविध मत हैं। एक मत के अनुसार 'मण्डूक' उस साधक का प्रतीक है जो **संसार की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में छलांग लगाता हुआ** अंततः संन्यास और ब्रह्मज्ञान की ओर अग्रसर होता है।

दूसरा मत इसे किसी **प्राचीन ऋषि-परंपरा या शाखा-नाम** से जोड़ता है। दोनों ही अर्थों में यह उपनिषद **आत्मिक संक्रमण** (spiritual transition) का ग्रंथ है – गृहस्थ से विरक्त, कर्म से ज्ञान और संसार से ब्रह्म की ओर।

मण्डूक उपनिषद के तीनों अध्याय क्रमशः साधक की **आंतरिक यात्रा** को रूपायित करते हैं–

* **प्रथम अध्याय –** संसार, कर्म, देह और इंद्रियों की असारता

* **द्वितीय अध्याय –** वैराग्य, संन्यास और आत्मचिंतन की आवश्यकता

* **तृतीय अध्याय –** ब्रह्मज्ञान, जीव-ब्रह्म ऐक्य और कैवल्य

यह क्रम स्पष्ट करता है कि यह उपनिषद **दार्शनिक विमर्श नहीं**, बल्कि **आध्यात्मिक अनुशासन की क्रमिक शिक्षा** है।

मण्डूक उपनिषद के प्रमुख विषय निम्नलिखित हैं–

* संसार की अनित्यता और दुःखमूलक प्रकृति
* कर्म, भोग और बंधन का पारस्परिक संबंध
* वैराग्य को मोक्ष का अनिवार्य साधन घोषित करना
* संन्यास का आंतरिक अर्थ (केवल वस्त्र-त्याग नहीं)
* आत्मा और ब्रह्म की एकता
* ज्ञान द्वारा ही मुक्ति की सिद्धि

यह उपनिषद स्पष्ट करता है कि **कर्म से शुद्धि हो सकती है, पर मुक्ति नहीं** – मुक्ति केवल आत्मज्ञान से संभव है।

मण्डूक उपनिषद को प्रायः–

* **संन्यास उपनिषद,**

* **वैराग्योपदेशात्मक उपनिषद** तथा

* **उत्तरकालीन उपनिषदिक परंपरा**

के अंतर्गत रखा जाता है। यह उपनिषद नारदपरिव्राजक, आश्रम, परमहंस आदि संन्यासोपनिषदों की ही वैचारिक धारा में स्थित है।

इस उपनिषद की भाषा–

* गंभीर

* सूत्रात्मक

* उपदेशात्मक और

* वैराग्य-प्रधान

है। इसमें अलंकारिक काव्य नहीं, बल्कि **स्पष्ट वैदिक-उपनिषदिक संस्कृत** का प्रयोग हुआ है। शैली कहीं-कहीं स्मृति और धर्मसूत्रों के निकट प्रतीत होती है, जो इसके उत्तरकालीन स्वरूप की पुष्टि करती है।

सामान्य पाठक के लिए मण्डूक उपनिषद यह संदेश देता है कि–

* जीवन का उद्देश्य केवल भोग या संग्रह नहीं

* बाह्य धर्म से अधिक आंतरिक शुद्धि आवश्यक

* वास्तविक स्वतंत्रता इच्छाओं से परे जाने में है

* आत्मज्ञान ही स्थायी शांति का मार्ग है

यह उपनिषद आधुनिक जीवन के असंतोष, तनाव और अर्थहीनता के प्रश्नों का उत्तर वैराग्य और विवेक के माध्यम से देता है।

शोध की दृष्टि से मण्डूक उपनिषद–

* अथर्ववेद की संन्यास परंपरा का प्रमाण

* वैदिक कर्म से उत्तरवैदिक ज्ञान-मार्ग की कड़ी

* अद्वैत वेदान्त की सामाजिक-आश्रमिक पृष्ठभूमि

* संन्यास की दार्शनिक अवधारणा का प्रामाणिक स्रोत

है। यह उपनिषद भारतीय चिंतन में सं**न्यास को सामाजिक नहीं, आध्यात्मिक क्रांति** के रूप में प्रस्तुत करता है।

मण्डूक उपनिषद आत्मबोध की उस अवस्था का ग्रंथ है जहाँ साधक संसार से पलायन नहीं करता, बल्कि संसार के सत्य को पहचान कर उससे ऊपर उठ जाता है। यह उपनिषद न तो कर्मकाण्ड का समर्थन करता है, न ही शुष्क तर्क का—यह सीधे **विवेक, वैराग्य और ब्रह्मज्ञान** की घोषणा करता है।

शान्ति पाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रुणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः। शान्तिः। शान्तिः॥

हे स्वामी!
इतनी कृपा कीजिये,
कानों से मंगल सुनूँ, आँखों से देखूँ मंगल ही,
आपकी पूजा करूँ तो करूँ मंगल हेतु,
आपके ही लिए बनाई यह सुन्दर काया
आप ही के लिए बनाये ये सुंदर अंग प्रत्यंग।
यश वृद्धि आपने दी,
पूषा, इंद्र, अनिष्टहर्ता गरुड़,
सब आप ही के रूप,
बृहस्पति एवं सर्व धातु भी अनिष्ट का हरण करें,
आपकी कृपा पाता रहूँ,
मन-वचन में आप समाये रहें॥
आप जीवन में शांति प्रदान करें,
ॐ शांति। शांति। शांति॥

प्रथम मुण्डक : प्रथम खंड

मन्त्रः1-3

ॐ ब्रह्मा देवानां प्रथमः संबभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता।
स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह ॥1॥
अथर्वणे यां प्रवदेत ब्रह्माऽथर्वा तं पुरोवाचाङ्गिरे ब्रह्मविद्याम्।
स भारद्वाजाय सत्यवाहाय प्राह भारद्वाजोऽङ्गिरसे परावराम् ॥2॥
शौनको ह वै महाशालोऽङ्गिरसं विधिवदुपसन्नः पप्रच्छ।
कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति ॥3॥

हे ब्रह्म देव!
आप हैं जगत के रचियता रक्षक
ब्रह्मा को आपने सर्वप्रथम रचा
अथर्वा और बड़े पुत्र को ब्रह्म विद्या दी।
अथर्व को अंगीकार किया सत्यव्रत ऋषि ने
फिर परंपरागत विद्या अंगीरा ऋषि को दी।
शौनक मुनि थे अधिष्ठाता; महान विद्यालय के,
विधिपूर्वक वे अंगीरा ऋषि के पास आये,
कहा उन्होंने प्रभु! निश्चय पूर्वक बतलाएँ
कौन है जो जानता सर्व ज्ञान है?

श्लोकः4-6

परा एवं अपरा विद्या

तस्मै स होवाच। द्वे विद्ये वेदितव्ये इति ह स्म
यद्ब्रह्मविदो वदन्ति परा चैवापरा च ॥4॥
तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा
कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति।
अथ परा यया तदक्षरमधिगज़्यते ॥5॥

यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुःश्रोत्रं तदपाणिपादम्।
नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मं तदव्ययं यद्भूतयोनिं
परिपश्यन्ति धीराः ॥6॥

हे नाथ!
तब अंगीरा ने कहा-
ज्ञानी निश्चय जानते
परा एवं अपरा विद्या जो मानते
वही सर्व ज्ञानी कहलाते।
छंद व्याकरण से समायोजित
चार वेदों का सृजन और
निरुक्त ज्योतिष अपरा विद्या है,
परम अविनाशी ब्रह्म जहाँ चले पता
वह विद्या होती परा विद्या।
जो पकड़ कर भी न पकड़ाए
होता वह ब्रह्म है,
न कोई रूप न कोई रंग,
न कोई आँख न कोई कान
वह अविनाशी सर्व व्याप्त है
सूक्ष्म से अति सूक्ष्म
जीव मात्र का कारण है वो,
ऐसा ही तो बतलाया आपने प्रभु॥

श्लोकः7-9

यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च यथा पृथिव्यामोषधयः संभवन्ति।
यथा सतः पुरुषात् केशलोमानि तथाऽक्षरात् संभवतीह विश्वम् ॥7॥
तपसा चीयते ब्रह्म ततोऽन्नमभिजायते।
अन्नात् प्राणो मनः सत्यं लोकाः कर्मसु चामृतम् ॥8॥

यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयं तपः।
तस्मादेतद्ब्रह्म नाम रूपमन्नं च जायाते ॥9॥
हे सृष्टि पति!
करोड़ों को निर्मित करते,
उदर में ही सर्जित करते,
धरा से औषधि वनस्पति उपजाते आप,
मनुज के अंग से रोम में उपजाते आप,
अविनाशी पर ब्रह्म की सृष्टि बंटी इस प्रकार।
संकल्प कर ब्रह्म रूप से ब्रह्म उत्पन्न होते,
अन्न, अन्न से प्राण, प्राण से मन बने
स्थूल जग के समस्त लोग निर्मित होते तब
कर्म करने को फल की इच्छा धारी
सब प्रकट होते तब।
ज्ञान रूप सर्वज्ञ ब्रह्म में महा जग है,
विराट जग में नामरूप अन्न भरपूर है,
ब्रह्म तत्व जान कर जानते हैं सभी
यही मूल है जान कर जानते सभी॥

द्वितीय खंड

श्लोकः1-3

तदेतत् सत्यं मन्त्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यंस्तानि
त्रेतायां बहुधा संततानि।
तान्याचरथ नियतं सत्यकामा एष वः पन्थाः सुकृतस्य लोके ॥1॥
यदा लेलायते ह्यर्चिः समिद्धे हव्यवाहने।
तदाऽऽज्यभागावन्तरेणाऽऽहुतीः प्रतिपादयेत् ॥2॥
यस्याग्निहोत्रमदर्शमपौर्णमासम
चातुर्मास्यमनाग्रयणमतिथिवर्जितं च।
अहुतमवैश्वदेवमविधिना हुतमासप्तमांस्तस्य लोकान् हिनस्ति ॥3॥

हे स्वामी!
यज्ञ एवं तप के कर्मों के मन्त्र को ऋषियों ने देख
सब वेदों में लिखा समझ खूब कहा
इस जग में मनुष्य निज नियम मान कर्म करते
यही एक मात्र मार्ग उन्नति का है,
अग्निहोत्र ने सर्वदा दे आहुति
मध्य भाग में कुंड के,
अग्नि देव खूब दहके।
अग्निहोत्र पूर्णिमा, अमावस्या करते नहीं यज्ञ
चतुर्मसीय यज्ञ जो नविन अन्न करे नहीं
अतिथि सत्कार करे नहीं,
आहुति दे ठीक बने नहीं
वैश्वदेव को अर्पित नहीं॥

श्लोक:4-6

अग्निहोत्र का फल

काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा।
स्फुलिङ्गिनी विश्वरुची च देवी लेलायमाना इति सप्त जिह्वाः ॥4॥
एतेषु यश्चरते भ्राजमानेषु यथाकालं चाहुतयो ह्याददायन्।
तं नयन्त्येताः सूर्यस्य रश्मयो यत्र देवानां पतिरेकोऽधिवासः ॥5॥
एह्येहीति तमाहुतयः सुवर्चसः सूर्यस्य रश्मिभिर्यजमानं वहन्ति।
प्रियां वाचमभिवदन्त्योऽर्चयन्त्य एष वः पुण्यः सुकृतो ब्रह्मलोकः ॥6॥

हे परमात्मन!
काली खूब उग्र बन मन को करे चंचल
लाल धूम भरे धूम्र चिंगारी करे
सात अग्नि करे प्रकाशित
सर्व दिशा में
तब आहुति दे उग्रता कम करे
अन्यथा राख हो जाए।
अग्निहोत्र समय पर जो करें आहुति वे धरें
यह आहुति रवि रश्मियाँ बन पहुंची इंद्र पास
आप कह रहे जो करते यज्ञ वे पहुँचते स्वर्ग अवश्य
अग्निहोत्र ने इस विधि बताया
स्वर्ग प्राप्ति का उपाय।
सूर्य किरण बनी आहुति कह रही
आवो शुभ कर्मों का फल श्रेष्ठ लोक में होता शोभित
यहाँ मधुर वाणी करती सत्कार
आहुति साधक को लती स्वर्ग द्वार॥

मन्त्रः7-9

प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म।
एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति ॥7॥
अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितं मन्यमानाः।
जङ्घन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः ॥8॥
अविद्यायं बहुधा वर्तमाना वयं कृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः।
यत् कर्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात् तेनातुराः क्षीणलोकाश्चयवन्ते ॥9॥

हे नाथ!
यह यज्ञ रूपी नौका दृढ़ सर्व साथ
सकाम कर्म, वाणी है इसमें
दुःख का नहीं कोई काम
यहाँ इस यज्ञ में मूर्ख कहते वही
जरा मृत्यु छूटे नहीं जिनसे
जो न पाते आपको।
जो अँधा है अंध मार्ग पर चल रहा
भटकता है वह पंडित नहीं अज्ञानी कहलाय।
सकाम कर्मों में लिप्त कृतार्थ अपने को मानता
विषयों का रस छोड़ जो कल्याण मार्ग अपनाता
उसे हर जन्म में पुण्य मिले
आपको प्राप्त होता वही दुःख दर्द भुलाये वही॥

श्लोकः10-13

विरक्त मनुष्य का वर्णन

इष्टापूर्तं मन्यमाना वरिष्ठं नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमूढाः।
नाकस्य पृष्ठे ते सुकृतेऽनुभूत्वेमं लोकं हीनतरं वाविशन्ति ॥10॥
तपःश्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये शान्ता विद्वांसो भैक्ष्यचर्यां चरन्तः।

सूर्यद्वारेण ते विरजाः प्रयान्ति यत्रामृतः स पुरुषो ह्यव्ययात्मा ॥11॥
परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्रह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन।
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं
ब्रह्मनिष्ठम् ॥12॥
तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक् प्रशान्तचित्ताय शमान्विताय।
येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं प्रोवाच तां तत्वतो ब्रह्मविद्याम् ॥13॥
हे नाथ!
यज्ञ के सकाम कर्म उत्तम कहलाते
मूर्ख तो अनेक हैं, उत्तम वस्तु को न पहचानते
स्वर्ग लोक में भोग भोगने पुण्य मिले तो,
इस लोक से नीचे लोक में वे जाते।
वन में बस कर जो प्राप्त करते शांति
तप एवं श्रद्धा से विद्वान करते भिक्षा प्राप्ति,
मृत्यु उपरांत जाते सूर्य मार्ग से
जहाँ आप अविनाशी नित्य पुरुष रहते।
कर्म का कर विचार
ज्ञानीजन कहें यह सार
सकाम कर्मों से प्रभु आप होते नहीं प्राप्त
ब्रह्म ज्ञान मिले तो ब्रह्म निष्ठ होते
हाथ में समिधा ले गुरु रूप आपको मान जाते
आपके पास।
शांत चित्त हैं जिनका,
मन करता संयमित इन्द्रियों को जिनका
ऐसा ज्ञानी शरण आवे
ऐसा शिष्य मुझे बनाओ,
तत्व विवेचन ज्ञान गुरु दें देव आप,
पा आपको प्रिय बनूँ आपका॥

द्वितीय मुण्डक : प्रथम खण्ड

श्लोकः1-3

तदेतत् सत्यं यथा सुदीप्तात् पावकाद्विस्फुलिङ्गाः
सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः।
तथाऽक्षराद्विविधाः सोम्य भावाः प्रजायन्ते तत्र चैवापि यन्ति ॥1॥
दिव्यो ह्यमूर्तः पुरुषः स बाह्याऽभ्यन्तरो ह्यजः।
अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात् परतः परः ॥2॥
एतस्माज्जायते प्रणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च।
खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी ॥3॥

हे स्वामी!
जिस प्रकार प्रखर अग्नि से सहस्त्रों रश्मिया
जागृत होती हैं,
वैसे ही नित्य ब्रह्म से विभिन्न पदार्थ उत्पन्न होते हैं।
आप दिव्य हो, पूर्ण हो, मन में प्राण नहीं पर आप
अन्दर बाहर से बहुत व्यापक हो,
जन्म मरण से परे,
निराकार, विशुद्ध सम्पूर्ण हो,
अविनाशी हो, जीवात्मा में श्रेष्ठ परमात्मा आप हो।
जिनके प्राण हो, मन इन्द्रिय भी उनकी हो,
आकाश, पवन से तेज़ जल, पृथ्वी से भरपूर।

श्लोकः4-6

अग्नीर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ दिशः श्रोत्रे वाग् विवृताश्च वेदाः।
वायुः प्रणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा ॥4॥
तस्मादग्निः समिधो यस्य सूर्यः सोमात् पर्जन्य ओषधयः पृथिव्याम्।
पुमान् रेतः सिञ्चति योषितायां बह्वीः प्रजाः पुरुषात् संप्रसूताः ॥5॥

तस्मादृचः साम यजूंषि दीक्षा यज्ञाश्च सर्वे क्रतवो दक्षिणाश्च।
संवत्सरश्च यजमानश्च लोकाः सोमो यत्र पवते यत्र सूर्यः ॥6॥

हे नाथ!
अग्नि आपका मस्तक हैं,
सूर्य चन्द्र चक्षु आपके,
दिशाएं कान हैं, वेद वाणी हैं,
वायु प्राण हैं,
विश्व हृदय है,
आपके चरणों से पृथ्वी बनी,
हे अन्तर्यामी आप घट-घट में बसते हो।
सामवेद, ऋग्वेद की ऋचा
यज्ञों की दीक्षा, कालजयी यजमान
पुन्य प्राप्ति के लोक
सब मिलते
जहाँ सूर्य चन्द्र का प्रकाश मिलता
जहाँ आप प्रकट होते।
विभिन्न देव हैं, ब्रह्म से हुए प्रकट सब,
साध्य गन से साध्य
मनुष्य, पशु पक्षी, वायु, अन्न आये,
तप श्रद्धा यज्ञ की विधि
सत्य ब्रहचर्य सब प्रकटे
परमात्मा आपके कारण॥

श्लोकः7-10

तस्माच्च देवा बहुधा संप्रसूताः साध्या मनुष्याः पशवो वयांसि।
प्राणापानौ व्रीहियवौ तपश्च श्रद्ध सत्यं ब्रह्मचर्यं विधिश्च ॥7॥
सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्मात् सप्तार्चिषः समिधः सप्त होमाः।

सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा गुहाशया निहिताः सप्त सप्त ॥8॥
अतः समुद्रा गिरयश्च सर्वेऽस्मात् स्यन्दन्ते सिन्धवः सर्वरूपाः।
अतश्च सर्वा ओषधयो रसश्च येनैष भूतैस्तिष्ठते ह्यन्तरात्मा ॥9॥
पुरुष एवेदं विश्वं कर्म तपो ब्रह्म परामृतम्।
एतद्यो वेद निहितं गुहायां सोऽविद्याग्रन्थिं विकिरतीह सोम्य ॥10॥

हे नाथ!
सात प्राणों की सात अग्नि ज्वाला हैं,
सात द्वार इन्द्रियों के, सात ही लोक बनाये,
सात विषय की समिधा बनी, जो हृदय में बसी,
इस तरह सात-सात का विभाजन किया प्रभु आपने।
समुद्र बनाए, पर्वत बनाए,
बहु रूपी नदियाँ भी बनाईं,
देह पुष्टि हेतु रस एवं औषधि बनाई,
इस पुष्ट देह में बसने वाले परमात्मा
प्राण एवं जीवन संग बसे रहें।
तप कर्म बन ब्रह्म बने परमात्मा
यह परमात्मा हृदय की गुहा में बसें,
हृदय की गाँठ खोल प्रभु,
अज्ञान बन्धु की भाँति
आप भी छूट जाएँ॥

द्वितीय खण्ड

श्लोकः1-3

आविः संनिहितं गुहाचरं नाम महत्पदमत्रैतत् समर्पितम्।
एजत्प्राणन्निमिषच्च यदेतज्जानथ सदसद्वरेण्यं परं
विज्ञानाद्यद्वरिष्ठं प्रजानाम् ॥1॥
यदर्चिमद्यदणुभ्योऽणु च यस्मिँल्लोका निहिता लोकिनश्च।
तदेतदक्षरं ब्रह्म स प्राणस्तदु वाङ् मनः।
तदेतत्सत्यं तदमृतं तद्वेद्धव्यं सोम्य विद्धि ॥2॥
धनुर् गृहीत्वौपनिषदं महास्त्रं शरं ह्युपासा निशितं सन्धयीत।
आयज्य तद्भावगतेन चेतसा लक्ष्यं तदेवाक्षरं सोम्य विद्धि ॥3॥

हे जगतपति!
हृदय गुफा में वास करने वाले
हे तेजोमय सन्निकट रहो,
महान पद के स्वामी,
प्राणों के आश्रयदाता
सत्य असत्य के ज्ञाता
मन बुद्धि को जान
श्रेष्ठ पसंद करो,
आप दीप्तिमान हैं,
आप में सौ लोक वास करें,
आप अति सूक्ष्म भी हैं,
मन वाणी प्राण सत्य करें
अमृत है, आदर्श है, लक्ष्य उत्तम है,
उस उत्तम लक्ष्य की प्राप्ति हेतु
आप साधन हैं।
प्रणव की धनुवा,

उपासना के तीक्ष्ण बाण
तल्लीनता से साध कर
ब्रह्म का लक्ष्य भेदन करूँ॥

मन्त्रः4-6

प्रणवो धनुः शारो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत् तन्मयो भवेत्॥4॥
यस्मिन् द्यौः पृथिवी चान्तरिक्षमोतं मनः सह प्राणैश्च सर्वैः।
तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथामृतस्यैष सेतुः॥5॥
अरा इव रथनाभौ संहता यत्र नाड्यः।
स एषोऽन्तश्चरते बहुधा जायमानः
ओमित्येवं ध्यायथ आत्मानं स्वस्ति वः पाराय तमसः परस्तात्॥6॥

हे नाथ!
प्रणव की धनुष
आत्मरूपी बाण
आप हों लक्ष्य
बाण से भेद कर प्राप्त करूँ आपको,
प्रमाद छोड़ साधक बन किस विधि लक्ष्य प्राप्त हो
तन्मय प्रभु आप ही रहें लक्ष्य सदा।
स्वर्ग में, गगन में, भूमि पर,
लोगों के मन व्यथित हैं
हे प्रभु जान कर भी
अन्य वार्ता न करूँ,
यह ही अमृत कुंड है।
नाड़ी में एक ही वास,
हृदय में आपका निवास
प्रणव उच्चारण से आपका ध्यान धरूँ

भवसिन्धु के तट से, अंधकार से,
आप ही पार करें
आप ही कल्याण करें॥

श्लोकः7 -9

यः सर्वज्ञः सर्वविद् यस्यैष महिमा भुवि।
दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येष व्योज़्न्यात्मा प्रतिष्ठितः॥
मनोमयः प्राणशरीरनेता प्रतिष्ठितोऽन्ने हृदयं सन्निधाय।
तद् विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीरा आनन्दरूपममृतं यद् विभाति॥7॥
भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे॥8॥
हिरण्मये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम्।
तच्छुभ्रं ज्योतिषं ज्योतिस्तद् यदात्मविदो विदुः॥9॥
हे निर्विकार स्वामी!
सर्व सर्वदा जानते
विश्व में आप ही हैं
ब्रह्म लोक में आत्मा,
गगन में भूमि में मन एवं प्राण
इन सब के स्वामी
देह में व्याप्त आप हैं,
आनंद रूप में मुझे मिलें ज्ञानी बनायें।
तत्व की जानकारी से हृदय गाँठ टूटे
छूट जाय शंका, कर्म के कष्ट नष्ट हो जाय।
निर्विकार निर्मल परमात्मा
शुद्ध तेज़ के तेज़ आप,
परमधाम में वास करते आप,

मुझे आत्म ज्ञान मिले ताकि
मैं आपको भी पहचानूँ,
प्रकाशमय धाम में विराजते प्रभु को जानू॥

मन्त्रः10-11

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥10॥
ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्ताद् ब्रह्म पश्चाद् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण।
अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्॥11॥

हे स्वामी!
सूर्य प्रभा को चन्द्र प्रभा न जीत सके,
चपला चमके नहीं, अग्नि के तेज़ बिना,
आपके प्रकाश से प्रकाशित जग सारा
सर्व पदार्थ जगत के प्रकाशित होते।
ब्रह्म आगे पीछे, दाहिने बाएँ हैं
नीचे ऊपर ब्रह्म हैं,
सर्व व्यापक सर्व स्थल ब्रह्म हैं,
यही ब्रह्म प्रकाश है जगत रूप में विकसित
अमृत रूपी ब्रह्म बिना
कोई भी अस्तित्व नहीं॥

तृतीय मुण्डक : प्रथम खंड

श्लोकः1-5

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥1॥
समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनिशया शोचति मुह्यमानः।
जुष्टं यदा पश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमिति वीतशोकः ॥2॥
यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्।
तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति ॥3॥

हे जगदीश्वर!
दो पक्षी एक वृक्ष पर रहते,
एक फल रसास्वादन करे,
एक मात्र देखता रहे।
जीवात्मा परमात्मा भी इसी भाँति देह में रहते,
जीव कर्म भोग करे, परमात्मा अवलोकन करे।
जीव तो राग में लिप्त, न देखे आपको,
मोह के वशीभूत वह, दीन है यह, शोकाकुल है यह,
भक्त ही परमात्मा आपको सेवते,
जो सेवते वे शोक रहित रहते।

श्लोकः4-6

प्रणो ह्येष यः सर्वभूतैर्विभाति विजानन् विद्वान् भवते नातिवादी।
आत्मक्रीड आत्मरतिः क्रियावा-नेष ब्रह्मविदां वरिष्ठः ॥4॥
सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः ॥5॥
सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येनाऽऽक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत् सत्यस्य परमं निधानम् ॥6॥

हे स्वामी!
ब्रह्मा कर्ता, जग के रचता,
प्रभु आपको हैं प्रिय,
तेजोमय हैं आप परम ब्रह्म,
देख-देख जीव हो प्रसन्न,
छूट पाप पुण्य से अनासक्त होते,
ज्ञान मिले, शांत बुद्धि प्राप्त हो।
आप तो हो प्राण, समस्त जग चलता उस से,
सर्व जगह प्रकाश उसका,
जो जान ले इसे उसकी कोई बड़ाई न हो,
कर अर्पण कर्म अपने प्रभु आपको,
आनंद प्राप्त करूँ मैं,
सब ही जगह हैं आप,
ज्ञानी तत्ववेत्ता कहते ये।
सत्य से प्राप्त हो, तप से मिलें आप
ब्रह्मचर्य से यथार्थ ज्ञान आपसे मिले
हृदय में ज्योति रूप हो
विशुद्ध ज्योति परमात्मा,
दोषरहित मैं बनूँ
हो प्राप्त आप मुझे॥
विजय तो सर्वदा सत्य की ही होती है
और असत्य की हानि,
आप प्राप्त होते सत्य से,
आप ही सत्य जग झूठा,
आपकी प्राप्ति का मार्ग सत्य से ही है,
ऋषि मुनि भी जानते
परम सत्य मात्र आप हो।

श्लोकः7-10

बृहच्च तद् दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्च तत् सूक्ष्मतरं विभाति।
दूरात् सुदूरे तदिहान्तिके च पश्यन्त्विहैव निहितं गुहायाम् ॥7॥
न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा नान्यैर्देवैस्तपसा कर्मण वा।
ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः ॥8॥
एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यो यस्मिन् प्राणः पञ्चाधा संविवेश।
प्राणैश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां यस्मिन् विशुद्धे विभवत्येष आत्मा ॥9॥
यं यं लोकं मनसा संविभाति विशुद्धसत्वः कामयते यांश्च कामान्।
तं तं लोकं जयते तांश्च कामां-स्तस्मादात्मज्ञं ह्यर्चयेत् भूतिकामः ॥10॥

हे सच्चिदानंद!
हे अचिन्त्य रूप धारी परमात्मा
आप ही महान दिव्य ब्रह्म हैं,
सूक्ष्म से अति सूक्ष्म, दूर से अति दूर हैं,
देह में रहते आप,
जो देखते आपको उसके हृदय में बसते आप
बाण से इन्द्रियां न पकड़ाए,
नयनों से देखा जाय,
तप कर्म जो नहीं करते उनको
अंग विहीन लगते परमात्मा,
ध्यान धर हृदय चक्षु से देख सकूँ,
पवित्र का अंतर समझ सकूँ,
निर्मल ज्ञान दृष्टि प्रदान करें।
सबके अंतस ब्रह्म विराजित,
जो नहीं जानते अज्ञानी हैं,
पाँच प्राण जहाँ रहते, अति सूक्ष्म हैं आप,

जो मन से जानते करते इच्छापूर्ति सदा
जो इस भाँति जानते आपको, रहते समीप सदा,
पवित्र मन से पूजूं करूँ आपको प्राप्त।
शुद्ध हृदय से जो चाहते विभिन्न लोकों को,
वे प्राप्त करते उन लोकों को और भोगते भोग
वही ऐश्वर्य उनका, वे ही पुण्य मानते,
मुझे आत्मा से प्राप्त ज्ञान दीजिये, स्तुति मैं करता॥

द्वितीय खंड

श्लोकः1-3

स वेदैतत् परमं ब्रह्म धाम यत्र विश्वं निहितं भाति शुभ्रम्।
उपासते पुरुषं ये ह्यकामास्ते शुक्रमेतदतिवर्तन्ति धीराः ॥1॥
कामान् यः कामयते मन्यमानः स कामभिर्जायते तत्र तत्र।
पर्याप्तकामस्य कृतात्मनस्तु इहैव सर्वे प्रविलीयन्ति कामाः ॥2॥
नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम् ॥3॥

हे नाथ!
परम ब्रह्म विश्व के निहित आप वैदिक रूप से शुभ करते हो
जो भी आपकी उपासना करता है,
वह जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाता है।
जो भोगों की इच्छा से भोग लोक में आता है
परन्तु मैं आपके प्रेम की इच्छा रखूँ
और जन्म उपरांत आपको प्राप्त करूँ
इस बंधन से छूट हमेशा के लिए आपका बन धन्य होऊँ।
बहुत सुनने से या व्याख्यान से आप नहीं मिलते,
जिस पर आपकी कृपा हो उसे ही मिलते आप,
जो मनोकामना से पूजें वही मिलते आपको,
आपके सत्य स्वरूप को दर्शन भी वही करते॥

श्लोकः4-6

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यो न च प्रमादात् तपसो वाप्यलिङ्गात्।
एतैरुपायैर्यतते यस्तु विद्वांस्तस्यैष आत्मा विशते ब्रह्मधाम ॥4॥
संप्राप्यैनमृषयो ज्ञानतृप्ताः कृतात्मानो वीतरागाः प्रशान्ताः
ते सर्वगं सर्वतः प्राप्य धीरा युक्तात्मानः सर्वमेवाविशन्ति ॥6॥
वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद् यतयः शुद्धसत्वाः।
ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे ॥6॥

हे नाथ!
भक्ति से ही मिलेंगे न मिलें निर्बल मन को,
अशुद्ध तप से नहीं मिलते परमात्मा,
जो साधक विचार कर उपासना करते
चित्त को लगा आत्म प्रवेश करते
उन्हें मिलते परमात्मा।
पवित्र ऋषियों की आसक्ति भी छूटती
ज्ञान से पूर्ण तृप्ति भी मिलती,
शांति मिले,
मुझे ज्ञान मिले ईश्वर साथ हो
सब देख सर्व तरफ पाऊँ आपको।
ज्ञान एवं विज्ञान से निश्चय ही तत्व का भास होता है,
योग एवं फल त्याग से मन का मेल दूर होता है,
इस प्रकार मेरी देह ब्रह्मधाम जाए
अमृत रूप बन मुक्त होऊँ।

श्लोकः7-9

गताः कलाः पञ्चदश प्रतिष्ठा देवाश्च सर्वे प्रतिदेवतासु।
कर्माणि विज्ञानमयश्च आत्मा परेऽव्यये सर्वे एकीभवन्ति॥7॥
यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽ स्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद्विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्॥8॥
स यो ह वै तत् परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति
नास्याब्रह्मवित्कुले भवति।
तरति शोकं तरति पाप्मानं गुहाग्रन्थिभ्यो विमुक्तोऽमृतो भवति॥9॥
हे परमात्मा!
जो ईश्वर को पाते उनकी देह वहीं रह जाती,
पंद्रह इन्द्रियों के विकार एक हो जाते,
कर्म सब जीव संग ज्ञानमय ईश्वर के हो जाते,
पूर्ण महात्मा ईश्वर के साथ एक हो जाते।

जिस प्रकार नदियाँ सागर से मिल कर एक हो जाती हैं,
दिव्य उत्तम प्रभु आपकी दिव्यता में एक हो जाऊँ
जो आपको जानता वही आप में मिल जाय,
ब्रह्म को जो जानता वह पुत्र कुल में न रहे,
शोक सिन्धु से तर कर वह पापों से मुक्त होता,
मेरी भी अज्ञान की गांठ हृदय से खोल अमर करें।

मन्त्रः10-11

तदेतदृचाऽभ्युक्तम्।
क्रियावन्तः श्रोत्रिया ब्रह्मनिष्ठाः स्वयं जुह्वत एकर्षिं श्रद्धयन्तः।
तेषामेवैतां ब्रह्मविद्यां वदेत शिरोव्रतं विधिवद् यैस्तु चीर्णम् ॥10॥
तदेतत् सत्यमृषिरङ्गिराः पुरोवाच नैतदचीर्णव्रतोऽधीते।
नमः परमऋषिभ्यो नमः परमऋषिभ्यः ॥11॥

हे जगन्नाथ!
निष्काम कर्म करे जो, ज्ञान वही पाता
आपमें निष्ठा बनी रहे
सच्ची श्रद्धा बनी रहे,
तप, हवन करता रहूँ
व्रत नियम पालन करूँ
इस भांति ब्रह्म प्राप्ति करूँ
आशीर्वाद दीजिये।
अंगीरा ऋषि ने कही सत्य विद्या,
प्रभु प्राप्ति की दी शिक्षा,
हे परम ऋषि नमन तुझे
बारम्बार नमस्कार करे यह जिज्ञासु ॥!

॥ ईति अथर्ववेद रचित अथ मुन्डकोपनिषद ॥

❖✸❖

परिचय

सुरेश चौधरी 'इंदु'

पिता का नाम : स्व. भोलाराम चौधरी
माता का नाम : श्रीमती दुर्गावती चौधरी
जन्म स्थान : जमशेदपुर (वर्तमान में झारखंड)
जन्म तिथि : 14 जुलाई, 1952

शिक्षा : विज्ञान में स्नातक, चार्टर्ड एकाउंटेंट्स, एकोल सुपेरियारे रोबर्ट दी सौबोर्न फ्रांस द्वारा पीएचडी (अर्थ एवं वित्त विश्लेषण) में स्वीकृत मानद; (BSc, FCA, PhD) आरंभिक शिक्षा जमशेदपुर भारतीय मोडल स्कूल कक्षा 7 तक, फिर ADLS हाईस्कूल में मैट्रिक 1963-1967, फिर जमशेदपुर को-ऑपरेटिव कॉलेज से विज्ञान में स्नातक (1967-1971)। इंस्टीट्यूट ऑफ चार्टर्ड एकाउंटेंट्स कोलकाता (दास एंड प्रसाद) से चार्टर्ड (1972-1976)।

जीवन वृतांत : 1977-1982, उषा अलॉयस एंड स्टील्स में मैनेजर फाइनेंस के रूप में कार्य। 1982-83 बिहार अलॉइ स्टील्स लिमिटेड में वाइस प्रेसीडेंट कमर्शियल। तत्पश्चात् निजी इस्पात एवं इस्पात से संबंधित कुल 18 कारखाने बड़ोदरा, गोधरा, मेघनगर, जमशेदपुर, चांडिल, बड़बिल, कोलकाता में लगाये। 2008 से 2011 तक आर्थिक सलाहकार के रूप में कार्य किया।

लेखन में रूचि 2011 से स्वास्थ्य के चलते। सभी कार्य छोड़कर केवल अध्ययन एवं लेखन की ओर झुकाव, तब से नियमित लेखन एवं शोध कार्य। लेखन में विशेष कर-हाइकु, मुक्त छंद, छंद मुक्त, छंद, बाल कविता, आलेख, आध्यात्म, शोध वैदिक सनातन दर्शन एवं आर्थिक विषय पर। भारत की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेखों एवं कविताओं का नियमित प्रकाशन, अंतर्राष्ट्रीय ब्लॉग अकेदेमिया, एडु में नियमित लेख प्रकाशन।

'ताजा टीवी' एवं 'दूरदर्शन' पर समय-समय पर चर्चाओं में भागीदारी।

अनुवादित कार्य का विवरण

1.1 श्री दुर्गतिविनाशनी : श्री दुर्गा सप्तशती का भावानुवाद छंद मुक्त लयबद्ध जिसकी विवेचना महामंडलेश्वर साक्षी जी महाराज एवं प्रसिद्ध साहित्य समीक्षक श्री वीरेन्द्र गोस्वामी, जयपुर ने लिखी। पुस्तक के दो संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।

1.2 प्रांजलि (भाग-2) : श्रीमद्भागवत एवं वेदों के 101 सूक्तों पर आधारित छंद मुक्त प्रार्थनाएँ, समीक्षा डॉ. उम्मेद सिंह बैद, पुस्तक में प्रार्थना के साथ उधृत श्लाकों की संख्या भी दी गयी है।

1.3 वेद से वेदांत तक-मूल पाठ सहित : 9 उपनिषद : ईशोपनिषद्, केन उपनिषद, कठोपनिषद, प्रश्न उपनिषद, मंडूक उनिपद, मांडूक्य उपनिषद, ऐतरिय उपनिषद, तैतरीय उपनिषद, श्वेताश्वेतर उपनिषद का छंद मुक्त काव्यात्मक अनुवाद, पुरुष सूक्त एवं नासदीय सूक्त का छंदोबद्ध अनुवाद।

समीक्षा : अंशु त्रिपाठी, प्रसिद्ध कवयित्री, डॉ. अल्पना गोस्वामी, विभागाध्यक्ष कलकत्ता विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग।

1.4 आदिशंकर रसमाधुरी :

मूल संस्कृत पाठ के साथ : आदि शंकराचार्य के निम्नलिखित स्त्रोतों का छंदोबद्ध अनुवाद

1. भजगोविंद : चौपाई एवं दोहों में अनुवाद
2. महिषासुर मर्दिनी : कनक मंजरी छंद
3. देव्यपराधक्षमापन स्तोत्रम् : हरिगीतिका छंद में
4. निर्वाण षटकम : कुकुम्भ छंद में
5. श्री गंगा स्त्रोत : लावणी छंद में अनुवाद
6. कनकधारा स्त्रोत : मूल छंद में

आशीर्वचन प्रसिद्ध गौ भक्त संत एवं रामजन्मभूमि के प्रमुख आचार्य धर्मेन्द्र द्वारा।

1.5 हर हर महादेव : मूल संस्कृत पाठ के साथ मंत्रों एवं स्त्रोतों का छंदोबद्ध अनुवाद :
विषय की विषद व्याख्या स्व-लिखित

1. शिव स्तुति-स्व-रचित संस्कृत में
2. महामृत्युंजय मंत्र : धनाक्षरी में
3. शिव पंचार मंत्र : चतुष्पदी में
4. द्वादश ज्योर्तिलिंग : चतुष्पदी में
5. रावण रचित शिवताण्डवस्तोत्रज़

यह स्त्रोत अनंग शेखर छंद में लिखा गया है, इसे इसी छंद में अनुवाद किया है।

6. श्री शिव महिम्न स्तोत्र : चतुष्पदी एवं लावणी छंद
7. रूद्राष्टक (तुलसीदास रचित) : चतुष्पदी में
8. शिव मानस पूजा स्त्रोत : षष्टपदी में आशीर्वचन आचार्य धर्मेन्द्र जी एवं बालव्यास जी द्वारा

1.6 सुभाषितम : मूल संस्कृत श्लोकों सहित भारतीय नीतिशास्त्र एवं विभिन्न सुभाषित 108-108 श्लोकों की दो माला का दोहों में अनुवाद।

1.7 गोपी गीत : यूँ तो गोपी गीत 19 श्लोकों का एक गीत जो इंदिरा छंद में लिखा गया है, परंतु यह गहन शोध का विषय है एवं प्रत्येक श्लोक अध्यात्म की ऊँचाई की छूता दृष्टिगत है। इसका अनुवाद भी इंदिरा छंद में ही किया है और विस्तार और विस्तृत भाष्य विभिन्न छंदों में है। यह एक खंड काव्य है।

1.8 सुर तरिंगिणी : देव सरिता माँ गंगा की समस्त कहानी एवं संस्कृत मूल के साथ गंगा लहरी, गंगा स्त्रोत, गंगाष्टकम (कालिदास, आदिशंकर, वाल्मीकि द्वारा रचित) का छंदों में अनुवाद, गंगा का अवतरण हुआ है तो क्या हुआ होगा व्यवहारिक दृष्टिकोण।

1.9 अप्रकाशित : भागवत में वर्णित अनेक गीतों एवं स्तुतियों जैसे, भ्रमर गीत, वेणु गीत, वर्षा गीत, कुन्ती द्वारा स्तुति, गर्भ स्तुति, गज मोक्ष मंत्र आदि का मूल संस्कृत पाठ सहित विभिन्न छंदों में अनुवाद। **विवरण इस प्रकार है :-**

क्रम	सूक्त/गीत/स्तुति वेदों से	मूल छंद	अनुवाद का छंद
1.	पुरुष सूक्त	निचृदनुष्टुप	चतुष्पदी
2.	नाशदीय सूक्त	नीचृत्रिष्टुप	चतुष्पदी
3.	हिरण्यगर्भ सूक्त	त्रिष्टुप	लावणी
4.	संज्ञान सूक्त	विराननुष्टुप	गीतिका
5.	श्री सूक्त	महा जगति	हरिगीतिका
	भागवत के गीत/स्तुति		
6.	भ्रमर गीत	शार्दूलविक्रीडीत	हरिगीतिका
7.	वर्षा गीत	वसांततालिका	दोहा-चौपाई
8.	यूगल गीत	स्वागता	स्वागता
9.	वेणु गीत	वंशस्थ	हरिगीतिका
10.	प्रणय गीत	उपेन्द्रवज्रा	कुकुम्भ
11.	धुन गीत	वसंततालिका	कुकुम्भ
12.	गजेन्द्र मोक्ष	स्तरगधरा	दोहा-चौपाई
13.	कुंती स्तुति		चतुष्पदी
14.	वसुदेव स्तुति		चतुष्पदी
15.	गर्भ स्तुति		धनाक्षरी
16.	चतुर्शलोकी भागवत		धनाक्षरी
17.	अन्य: कृष्णाष्टकम	पैंचचामर	पैंचचामर

अन्य भाषा से अनुवाद

2.10 अड़सठ शरद रवीन्द्र की शरण : रवीन्द्र के मूल 68 बंगला गीतों को देवनागरी में लिखकर अनुवाद प्रथम अनुवाद है, जो छंदबद्ध है। अभी तक जितने भी अनुवाद हुए हैं, वे सब छंद मुक्त अतुकांत या तुकांत अनुवाद ही हुए हैं। इसकी समीक्षा प.बंगाल के पूर्व राज्यपाल केशरीनाथ त्रिपाठी जी, कलकत्ता विश्वविद्यालय की विभागाध्यक्ष डॉ. राजश्री शुक्ल, प.बंगाल शिक्षण विश्वविद्यालय की उपकुलपति डॉ. सोमा बंदोपाध्याय एवं पं. सुरेश नीरव ने की है।

अध्यात्म एवं धर्म पर आधारित पुस्तकें

3.11 भारतीय दर्शन : भारत के मुक्त 6 दर्शनों का परिचय। इसमें सनातन धर्म के आस्तिक दर्शनों की प्रारंभिक जानकारी है।

3.12 भारत की अन्य दर्शन : भारत के अन्य दर्शन जिन्हें नास्तिक दर्शन कहा गया है। उनके बारे में प्रारंभिक जानकारी, ये दर्शन जैसे चवार्क, बुद्ध, जैन दर्शन हैं।

3.13 वेदान्त : आदि शंकराचार्य द्वारा चार धामों के चार महावाक्य की विस्तृत चर्चा, जिसकी भूमिका लिखी है दर्शन के महाज्ञानी डॉ. उम्मेद सिंह वैद ने।

3.14 श्रीमद्भागवत महापुराण-परिचय एवं समीक्षा : श्रीमद्भागवत को पंचम वेद भी कहा गया है पर आजकल हर गली-मोहल्ले में हम भागवत के पाठ पर फिल्मी तर्ज के गानों पर लिखे भजनों पर नृत्य देखते हैं। एक व्यवहारिक दृष्टि से भागवत की समीक्षा की गई है, इसमें भागवत कथा के बारे में नहीं बल्कि उसके लिखने के उद्देश्य के बारे में बताया गया है।

3.15 वेदों का परिचय एवं समीक्षा : चार वेद क्या है। इनमें क्या विषय वस्तु है। इनका भाष्य किसने-किसने लिखा है। उन भाष्यों में क्या है। समुचित जानकारी जिसे एक हिन्दू को ही नहीं बल्कि विश्व के हर प्राणी को जानना आवश्यक है।

3.16 मनुस्मृति-परिचय एवं समीक्षा : कालांतर में मनुस्मृति को अभिशाप घोषित कर दिया गया है, जबकि यह हर भारतीय की और भारतीय संस्कृति की रूलबुक है। इसमें जन्म से मृत्यु तक के सभी संस्कारों के निर्वहन का नियम बताया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में प्रेक्षप मंत्रों एवं शंकाओं का निवारण करने का प्रयत्न किया गया है।

3.17 भ्रम और भ्रांतियाँ : सनातन धर्म में व्याप्त भ्रम जैसे दलित का शोषण 5000 वर्षों से हो रहा है इत्यादि का तथ्यपरक उत्तर, कई भ्रांतियाँ दूर होंगी इसे पढ़ने से।

शोध पुस्तक

3.18 चमत्कृत करती भाषा संस्कृत : संस्कृत कितनी चमत्कारी भाषा है, उसके हर पहलू पर क्रमश: आलेख लिखे थे, उनका संग्रह इस पुस्तक में है।

काव्य

4.19 तिमिर ढलेगा : आशाओं को जागृत करती 101 प्रेरक कविताओं की पुस्तक जिसका तीसरा संस्करण छप कर आ चुका है।

4.20 बुलबुले-सी जिंदगी : 101 छंद मुक्त कविताएँ जीवन के विभिन्न पहलुओं पर लिखी हुई, जिसकी समीक्षा प्रसिद्ध गीतकार रमेन्द्र मोहन त्रिपाठी एवं प्रसिद्ध लेखक शिखर चंद जैन ने लिखी है, पुस्तक का दूसरा संस्करण उपलब्ध है।

4.21 कुछ माणिक कुछ मोती : प्रांजल हिन्दी में रचित छंदबद्ध कविताएँ अलग-अलग विषय पर क्रमबद्ध, समीक्षा प्रख्यात गीतकार श्री विष्णु सक्सेना, श्रीमती सरिता शर्मा एवं प्रख्यात साहित्यकार डॉ. प्रेम शंकर त्रिपाठी ने लिखी हैं, पुस्तक आर्ट पेपर पर बहुरंगी है।

4.22 प्रांजलि : जीवन दर्शन पर आधारित 101 प्रार्थनाएँ, छंद मुक्त, समीक्षा वीरेन्द्र गोस्वामी, सर्वेश अस्थाना एवं भागवताचार्य पं. श्रीकांत शर्मा बालव्यास जी ने लिखी है। पुस्तक के दो संस्करण आ चुके हैं।

बाल गीत

4.23 आसमान को छू लें : जयपुर के कल्याण सिंह शेखावत के संग यह बाल गीत की पुस्तक बहुरंगी बड़ी साइज में बालकों को मोहती बनी है, जिसकी समीक्षा प्रसिद्ध बाल लेखक संजय जायसवाल 'संजय' एवं आकाशवाणी, कोलकाता की उद्घोषिका सविता पोद्दार ने लिखी है।

अन्य काव्य

4.24 हे माँ : कुल देवी शक्ति स्वरूप माँ जीण भवानी को समर्पित पुस्तिका जिसमें संस्कृत स्तुति से आरंभ कर के 18 सनातन छंदों की रचनाएँ लिखी गई है।

4.25 माँ : मेरी जननी को हर वर्ष काव्याभ्ली देता रहा हूँ, उनके देहावसान पर समर्पित पुस्तिका, जिसमें 20 गीत छंद बद्ध एवं छंद मुक्त दोनों है।

4.26 शून्य से शून्य तक : दृश्य बनाते हुए 81 कविताएं जो जीवन के विभिन्न आयामों पर लिखी गई है, ये कविताएं छंद मुक्त ले बद्ध है।

विविध

5.27 मूल्यांकन : भारतीय अर्थव्यवस्था का आंकलन 2019 में इसे स्व. विलास राव जी के सहयोग से लिखा था। भारत अर्थव्यवस्था के हर पहलू पर गहन चिंतन आंकड़ों के साथ एवं सुझाव प्रधानमंत्री कार्यालय भेजे गए, जिसमें कई सुझावों को मंजूरी मिली।

5.28 भारत की आर्थिक स्थिति में क्या उचित (प्रकाशनाधीन) : समय-समय पर भारतीय अर्थव्यवस्था पर लेख लिखता रहा हूँ। नोटबंदी का सुझाव भी देने वाले कुछ लोगों में से मैं भी था। इन लेखों को एकत्रित कर पुस्तक का रूप दिया गया है।

5.29 भारतीय काव्य संहिता : भारत में प्रचलित सभी काव्य विधाओं का विवरण लिखने की विधा कैसे लिखें, किन बातों का ध्यान रखें-छंद, छंद मुक्त, मुक्त छंद, हाइकु, गीतिका, गज़ल इत्यादि।

यात्रा संस्मरण

5.30 ऐक्सडेनल टूर इन हाइबेरनेसन : यात्रा संस्मरण, लेख की अनियोजित यात्रा के 7 माह जिसमें उसने पूरे भारत का भ्रमण किया। उन भ्रमणों का रोचक विवरण ललित निबंध रूप में। पुस्तक निखिल प्रकाशन आगरा से प्रकाशित।

संवत 2081 में प्रकाशित

5.31 : इंदु प्रभा - छंद बद्ध कविताओं का संग्रह जिन्हें विषयानुसार अनुक्रमित किया गया है।

5.32 : मैं जीवन दंड विधान हूं-नवगीत एवं छंद वद्ध गीतों का संग्रह

5.33 : लघु उपनिषद त्रयी (मांडूक्य, ईश, केन उपनिषद का व्यावहारिक अर्थों सहित भाष्य मूल श्लोक के साथ)

5.34 : इंदु पदावली (कृष्ण भक्ति पद) : 92 कृष्ण भक्ति के एवं 21 राम भक्ति के पद। पद जो एक लुप्त होती विधा है, उसे पुनर्जीवित करने का प्रयास।

5.35 : इंदु पदावली (भाग 2) निर्गुण पद : कबीर, रैदास, दादू इत्यादि संतों की परंपरा को बढ़ाते हुए 95 निर्गुण पद।

5.36 : दोहांजलि, निर्गुण सगुण एवं नीति परक 711 दोहों का अनुपम संग्रह जिसमें 51 दोहे मीतू कनोडिया जी के सौजन्य से समाहित किये गए हैं।

कुछ प्रमुख सम्मान :

1. भारत गौरव (इस्पात में अभूतपूर्व कार्य हेतु तत्कालीन इस्पात मंत्री के कर-कमलों से दिल्ली की एक स्वयंसेवी संस्था द्वारा।)
2. केंद्रीय सचिवालय द्वारा राजभाषा गौरव पश्चिम बंगाल के तत्कालीन राज्यपाल श्री केशरीनाथ त्रिपाठी जी द्वारा।
3. विद्या वाचस्पति की मानद उपाधि विक्रमशिला हिंदी विश्वविद्यालय द्वारा।

4. साहित्य शिरोमणि दामोदरदास चतुर्वेदी साहित्य शिखर सम्मान 2021 एवं 2022 (पूर्व में यह सम्मान अटल बिहारी वाजपेयी, पंडित गोपालदास नीरज, उदप्ताप सिंह जी इत्यादि को मिला है।)
5. श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार साहित्य सम्मान, अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन पूर्वी सिंहभूम शाखा द्वारा।
6. साहित्य मार्तण्ड सम्मान प्रसिद्ध संस्था बिहार हिंदी सम्मेलनी, पटना द्वारा।
7. हिंदी साहित्य शिरोमणि मानद सम्मान, साहित्य मण्डल श्रीनाथ द्वारा।
8. 'हिंदी सेवा सम्मान' श्रवण संस्था व शोध संस्थान, हरिद्वार द्वारा।
9. कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' साहित्य रत्न सम्मान सह नगद राशि प्रख्यात संस्था अभ्युदय द्वारा।
10. मानद पीएचडी वैदिक हिंदी साहित्य में लेगॉस यूनिवर्सिटी की शोध इकाई 'इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ बिजनस मैनिज्मन्ट एंड रेसर्च टेक्नोलॉजी' द्वारा।

विशेष उपलब्धि : 1116 दिनों में 1000 भजन लिखकर विश्व कीर्तिमान स्थापित किया जो कि इंटरनेशनल बुक ऑफ रेकॉर्ड्स द्वारा प्रकाशित और प्रमाणित किया गया।

साहित्यिक एवं सामाजिक गतिविधि : अंतर्राष्ट्रीय संस्था रचनाकार (शुक्तिका इंडिया फाउंडेशन का एक प्रकल्प) के संस्थापक सभापति, संस्था प्रति वर्ष साहित्य एवं संस्कृति के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य हेतु दस व्यक्तियों को सम्मानित करती है एवं नगद राशि भी भेंट करती है।

शुक्तिका इंडिया फाउंडेशन के संस्थापक न्यासी जो कैंसर पीड़ित असहाय रोगियों के नि:शुल्क चिकित्सा की सुविधा प्रदान करती है।